ऋग्वेद ओ३म् यजुर्वेद

पवमान

(मासिक)

वर्ष : 34 बैशाख-ज्येष्ठ वि०स० 2079 अंक : 5 मई 2022

मुद्रक: सरस्वती प्रेस, देहरादून वजन: 50 ग्राम

18 अगस्त 1877 को लाहोर में लिया गया स्वामी दयानन्द सरस्वती जी का एक दुर्लभ चित्र

वैदिक साधन आश्रम तपोवन, नालापानी, देहरादून-248008

सामवेद अथर्ववेद

पवमान पत्रिका हमारी वेबसाइट www.vaidicsadhanashramdehradun.com पर भी उपलब्ध है।

Transforming the way businesses communicate & interact with their customers

Karix empowers organisations to enable smarter, relevant, and personalised conversations with their customers and create seamless customer experiences, across the globe. Purpose-built for enterprises, Karix offers a rich suite of communication channels with superior security standards, unmatched customer support and a reliable cloud-based platform to support all communication needs.

21+
years of industry experience with a stronghold in all major industries

2,000+
Enterprise customers

100+ BN
Omni-channel messages processed annually

24x7
Support provided by over 200 engineers

10,000+
Business processes supported

CUSTOMER ENGAGEMENT SOLUTIONS SUITE

- WhatsApp
- A2P Messaging
- Email
- RCS
- Voice
- Marketing Automation
- Campaign Automation
- Chatbots
- Live Agent Chat

WHY DO FORTUNE 1000 BUSINESSES PREFER KARIX?

- Best in class connectivity
- High available systems
- Hybrid cloud infrastructure
- Deep domain understanding

ओ३म्

पवमान

वर्ष—34 अंक—5

बैशाख–ज्येष्ठ 2079 विक्रमी मई 2022

सृष्टि संवत् 1,96,08,53,123 दयानन्दाब्द : 198

★

—: संरक्षक :—

स्वामी चित्तेश्वरानन्द सरस्वती

मो. : 9410102568

★

—: अध्यक्ष :—

श्री विजय कुमार

मो. : 9837444469

★

—: सचिव :—

प्रेम प्रकाश शर्मा

मो. : 9412051586

★

—: आद्य सम्पादक :—

स्व0 श्री देवदत्त बाली

★

—: मुख्य सम्पादक :—

डॉ० कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री

अवैतनिक

मो. : 9336225967

★

—: सहायक सम्पादक :—

अवैतनिक

मनमोहन कुमार आर्य–

मो. : 9412985121

★

—: कार्यालय :—

वैदिक साधन आश्रम, तपोवन,

तपोवन मार्ग, देहरादून–248008

दूरभाष : 0135–2787001

मोबाईल : 7895978734 (श्री चन्दन सिंह)

Email : vaidicsadanashram88@gmail.com

Web-www.vaidicsadhanashramdehradun.com

विषयानुक्रम

सम्पादकीय	डॉ. कृष्णकान्त वैदिक शास्त्री	2
वेदामृत	आचार्य डॉ. रामनाथ वेदालंकार	3
यम और नचिकेता	डॉ० कृष्णकान्त वैदिक शास्त्री	4
यज्ञ एवं योग मनुष्य के आवश्यक कर्तव्य एवं...	मनमोहन कुमार आर्य	6
बाल्मीकि रामायण के वेदाधारित धर्म से...	डॉ० कृष्णकान्त वैदिक शास्त्री	9
महर्षि दयानन्द सरस्वती जी द्वारा...	पं उम्मेद सिंह विशारद	12
आर्यसमाज के उज्जवल रत्न थे पं. ...	मनमोहन कुमार आर्य	14
जीवन का आधार नारी का संस्कार	आचार्य विजयपाल आर्य	19
स्वाध्याय का महत्व	मनमोहन कुमार आर्य	21
A Tribute to the Great Aryans		23
तंत्रिका तंत्र से सम्बद्ध रोग	डॉ० भगवान दास	26
आखिर, यह सब हमें क्यों नहीं पढ़ाया...		29

वैदिक साधन आश्रम तपोवन, देहरादून के बैंक खातों का विवरण

दान हेतु बैंक खाते का नाम	बैंक का नाम व पता	बैंक अकाउन्ट नं.	IFSC Code
आश्रम को दान देने के लिये			
1. "वैदिक साधन आश्रम"	केनरा बैंक, क्लाक टावर ब्रांच देहरादून	2162101001530	CNRB0002162
पवमान पत्रिका शुल्क			
2. "पवमान"	केनरा बैंक, क्लाक टावर ब्रांच देहरादून	2162101021169	CNRB0002162
तपोवन विद्यानिकेतन स्कूल के लिये			
3. 'तपोवन विद्या निकेतन"	यूनियन बैंक, तपोवन रोड, नालापानी, देहरादून	602402010003171	UBIN0560243

पवमान पत्रिका में विज्ञापन के रेट्स

1. कलर्ड फुल पेज — रु. 5000/— प्रति माह
2. ब्लैक एण्ड व्हाईट फुल पेज — रु. 2000/— प्रति माह
3. ब्लैक एण्ड व्हाईट हॉफ पेज — रु. 1000/— प्रति माह

सदस्यों के लिए पवमान पत्रिका के रेट्स

1. वार्षिक मूल्य — रु. 200/— वार्षिक
2. 15 वर्ष (आजीवन) के लिए मूल्य — रु. 2000/—

नोटः पवमान पत्रिका फुटकर विक्रय के लिए उपलब्ध नहीं है।

पवमान में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार सम्बन्धित लेखक के हैं। सम्पादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। किसी भी विवाद के प्रतिवाद हेतु न्यायक्षेत्र देहरादून ही होगा। आपत्ति की अवधि प्रकाशन तिथि से एक माह के भीतर ही मानी जायेगी।

सम्पादकीय

वेद प्रतिपादित धर्म

धर्म शब्द धाञ् धारणपाणपोषणयोः धातु से बना है, जिसका अर्थ है धारणा और पोषण करना, अर्थात् पदार्थ के धारक और पोषक तत्व को धर्म कहते हैं जिसका अभिप्राय है जिन तत्वों से पदार्थ का अस्तित्व है वही तत्व उस पदार्थ का धर्म है। दूसरे शब्दों में जिन तत्वों के नष्ट हो जाने पर पदार्थ भी नष्ट हो जाय वे तत्व उस पदार्थ के धर्म हुए, अर्थात् बिना अपने धर्म के पदार्थ का भी अस्तित्व नहीं है। मनुस्मृति में कहा गया है-

धृतिः क्षमा दमो स्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः। धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्॥

अर्थात् धृति, क्षमा, दम, अस्तेय, शोच, इंद्रियनिग्रह, धी, विद्या, सत्य और अक्रोध-धर्म के ये दश लक्षण हैं। सभी शास्त्र जीवन के चार प्राप्तव्यों धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष का ही प्रतिपादन करते हैं। सभी प्रकार के विकास के माध्यम से हम लोग सुख भी प्राप्त करना चाहते हैं। महाप्रज्ञ आचार्य चाणक्य ने लिखा है कि सुख का आधार धर्म है-सुखस्य मूलं धर्मः (चाणक्य सूत्र १/२)। यह समस्त लोक धर्म से धारण किया हुआ है धर्मेण धार्यते लोकः (चाणक्यसूत्र ३/.२३) अथर्ववेद (१२/१.१) में भी कहा है सत्य उग्रता, ऋत, दीक्षा, तप, ब्रह्म एवं यज्ञ इस पृथिवी को तथा राष्ट्र को धारण करते हैं। जीवन या विश्व के धारकतत्वों को ही भारतीय मनीषा ने धर्म के नाम से परिभाषित किया है।

अथर्ववेद के एक मन्त्र में कहा गया है-

जनं बिभ्रती बहुधा विवाचसं नानाधर्माणं पृथिवी यथोकसम्। सहस्रं धारा द्रविणस्य मे दुहां ध्वरषु धेनुरनपस्फुरन्ती।।

अथर्ववेद (१२।१।४५)

अर्थात् विविध भाषाओं को बोलनेवाले और भिन्न-भिन्न धर्मो (पन्थों) को मानने वाले लोगों को इस भूमि पर इस प्रकार प्रेम से मिलकर रहना चाहिए जैसे एक घर के लोग रहा करते हैं। इस प्रकार प्रेम से रहनेवाले लोगों के लिए यह भूमि सहस्रों प्रकार की सम्पत्ति की धाराएँ बहा देगी, जैसेकि अपनी सेवा करनेवाले के लिए दुधारू गाय अपने दूध की धाराएँ बहा देती है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपने तीसरे पूना प्रवचन में में कहा था-

परमेश्वर की आज्ञा यह धर्म, अवज्ञा यह अधर्म, विधि यह धर्म, निषेध यह अधर्म, न्याय यह धर्म, अन्याय यह अधर्म, सत्य यह धर्म, असत्य यह अधर्म, निष्पक्ष पात यह धर्म, पक्षपात यह अधर्म। आर्योद्देश्य रत्नमाला के अनुसार जिसका स्वरूप ईश्वर की प्राज्ञा का यथावत् पालन प्रौर पक्षपातरहित न्याय सर्वहित करना है, जोकि प्रत्यक्षादि प्रमाणों से सुपरीक्षित और वेदोक्त विद्यायुक्त होने से सब मनुष्यों के लिए यही एक धर्म मानना योग्य है। जिसका स्वरूप ईश्वर की आज्ञा को छोड़कर और पक्षपातसहित अन्यायी होके बिना परीक्षा करके अपना ही हित करना है, जिसमें अविद्या, अभिमान, क्रूरतादि दोषयुक्त होने के कारण वेद विद्या से विरुद्ध है, इसलिए यह सब मनुष्यों को छोड़ने योग्य है। ऋग्वेद के मन्त्र संख्या (०१.०९.१०) में महर्षि द्वारा भावार्थ में वेद आज्ञा नामक धर्म का उल्लेख किया गया है। वेद में परमेश्वर द्वारा विधि और निषेध का निर्देश है। यही वेद प्रतिपादित आज्ञाधर्म है। इसी धर्म को प्राप्त करने की बात कही गयी है। विभिन्न सास्त्रों में परिभाषित धर्म-मनुष्य को क्या कार्य करने चाहिए और क्या नहीं, यही बताते हैं, अतः निष्कर्षतः हम यही कह सकते हैं कि वेद प्रतिपादित धर्म ही अनुकरणीय है।

डॉ० कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री

ओ३म्

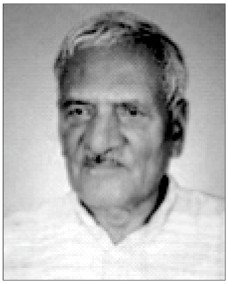

वेदामृत

'कैसे हम प्रभु को भेंट दें?'

कथा दाशेमाग्नये कास्मै, देवजुष्टोच्यते भामिने गीः।
यो मर्त्येष्वमृत ऋतावा, होता यजिष्ठ इत् कृणोति देवान्।।

ऋग्वेद 1.77.1

ऋषिः गोतमः राहूगणः। देवता अग्निः। छन्दः निचृत् पंक्तिः।

(कथा) कैसे (अग्नये) अग्रणी परमेश्वर के लिए (दाशेम) भेंट दें? (अस्मै) इस (भामिने) भासमान के लिए (का) कौन–सी (देवजुष्टा) देव–प्रिय तथा विद्वत–सेवित (गीः) वाणी (उच्यते) बोली जाती है? (मर्त्येषु) मरणधर्मा मनुष्यों के बीच में (अमृतः) अमर (ऋतावा) सत्य गुण, कर्म स्वभाववाला, (होता) सब पदार्थों का दान तथा आदान करनेवाला अर्थात् सृष्टिकर्त्ता एवं प्रलयकर्त्ता, (यजिष्ठः) अतिशय संगम करानेवाला (यः) जो (इत्) निश्चय ही [मनुष्यों को] (देवान्) देव (कृणोति) बनाता है।

हम परमेश्वर को भेंट चढ़ाना चाहते हैं। पर कैसे भेंट चढ़ायें और किस वस्तु की भेंट चढ़ायें? कई सम्प्रदाय परमेश्वर की मूर्ति बनाकर उस पर पत्र, पुष्प, फल, तोय, मिष्टान्न, सुवर्ण, वस्त्र आदि की भेंट चढ़ाते हैं। पर जो निराकार है, निरवयव है, अशरीर है, हम उसकी मूर्ति कैसे बनायें? जो सब जग को खिलानेवाला है, उसे हम फल, मिष्टान्न आदि कैसे खिलायें? उसके लिए तो सच्ची भेंट भक्ति की भेंट कही है। कौन–सी वाणी से हम उसका गुणगान करें? वह तो वाणी से अगोचर है। मुनिजन उसकी मौन आराधना कर लेते हैं?, किन्तु हमारे अन्दर तो मौन आराधना का सामर्थ्य भी नहीं है। अतः वाणी का प्रयोग तो करना ही होगा। अतः आओ, हम 'देवजुष्टा' वाणी का प्रयोग करें। 'देवजुष्टा' वाणी में 'साम' का संगीत होता है, उस वाणी में 'ऋचा' की पवित्रता होती है। 'भामी' (भास्वान्) परमेश्वर उसी वाणी से रीझता है। हृदय से निकली हुई वही वाणी ईश्वराराधन की क्षमता रखती है। ऊपरी मन से की हुई स्तुतिवाणी परमेश्वर को प्रिय नहीं होती।

जिस परमेश्वर के लिए हम देवजुष्टा वाणी बोलना चाहते हैं, उसका स्वरूप भी हमें जान लेना चाहिए। वह हम मरणधर्माओं के बीच में अमर बनकर बैठा हुआ है। वह 'ऋतावा' है, सत्य गुण–कर्म–स्वभाव वाला है। वह 'होता' है, दान और आदान की क्रिया करनेवाला है। वह सृष्टि के आरम्भ में सकल पदार्थों को उत्पन्न कर उनका दान हमें करता है और प्रलयकाल में सब जग–प्रपंच को प्रकृति के गर्भ में ले लेता है। वह 'यजिष्ठ' है, अणु–अणु में संगम कर सब पदार्थों को रचने वाला, रचे हुए सूर्य, पृथिवी आदि पदार्थों में परस्पर संगति करानेवाला तथा शरीर के भी विभिन्न अंगों में सामंजस्य उत्पन्न करनेवाला है। वह 'अग्नि' प्रभु मनुष्यों को 'देव' बनाने की भी शक्ति रखता है। जन–साधारण में दिव्य गुणों को उत्पन्न कर उन्हें 'देव' बना देता है। आओ उस दिव्य प्रभु की हम 'देवजुष्टा' वाणी से पूजा करें, वन्दना करें, आराधना करें।

(आचार्य डॉ0 रामनाथ वेदालंकार की पुस्तक वेद–मंजरी से साभार प्रस्तुत)

यम और नचिकेता

–डॉ० कृष्णकान्त वैदिक शास्त्री

बहुत पुरानी बात है। उस जमाने में तपस्वी साधु और ऋषि–मुनि लोक–कल्याण के लिए अनेक प्रकार के यज्ञ किया करते थे। वाजश्रवा नाम के एक ऋषि ने भी एक यज्ञ किया। यज्ञ का नाम था सर्वमेध । इस यज्ञ के द्वारा यज्ञकर्ता सभी सांसारिक वस्तुओं का दान कर देता है। केवल जीवन निर्वाह के लिए थोड़ी–सी वस्तुएँ अपने पास रखता है। किन्तु भौतिक वस्तुओं के दान से बढ़कर त्याग वह होता है जब मनुष्य अपने अहंकार, गर्व और मिथ्या अभिमान को छोड़ देता है। वह स्वार्थ–बुद्धि को त्यागकर लोकहित में स्वयं को लगाए। सर्वमेध का सच्चा अर्थ तो यही है।

किन्तु ऐसा लगता है कि बाजश्रवा का यज्ञ तो केवल दिखावे का ही था। अधिक क्या कहें, उसने जो गाएँ विद्वान ब्राह्मणों को दीं, वे ऐसी थीं जो अब दूध देने में सर्वथा असमर्थ थीं। ऐसी बूढ़ी गाएँ देकर शायद उसने सोचा होगा कि लोग उसके दान की प्रशंसा करेंगे, किन्तु यहाँ तो मामला उल्टा ही पड़ा। अन्य लोग चाहे कहें या न कहें, यदि हम कोई गलत काम करते हैं तो सबसे पहले तो हमारे बच्चे ही हमारे अनुचित काम की आलोचना करेंगे। वाजश्रवा का पुत्र तो अत्यन्त बुद्धिमान तथा विचारशील था। उसने अपने पिता के इस दोषपूर्ण दान को देखकर कहा पिता श्री! आपने जो गाएँ इन विद्वान ब्राह्मणों को दी हैं, वे तो सब बूढ़ी हो चुकीं। अब इनमें न तो बछड़े पैदा करने की शक्ति है और न दूध देने की, ऐसी व्यर्थ की वस्तु दान में देकर आप भला कौन सा यश प्राप्त कर लेंगे? बेटे की नाराजगी जब थोड़ी और बढ़ी तो उसने पिता से यहाँ तक कह दिया कि आपने तो सर्वमेध यज्ञ किया है जब सब–कुछ दे दिया तो मुझे भी किसी को देदें ताकि पूरी छुट्टी हो जाए। नचिकेता ने यह बात थोड़े आवेश में कही थी, किन्तु उससे पिता का गुस्सा और अधिक भड़क उठा। अब उसने अपना आपा खोकर यहाँ तक कह दिया कि जा तुझे मृत्यु (यम) को देता हूँ।

अब बात तो सीधी–सी है। कहकर तो हम किसी को मृत्यु के हवाले कर नहीं सकते। हमारे चाहने मात्र से तो एक चींटी भी नहीं मरती, किन्तु बालक नचिकेता तो समझदार था। वह अपने पिता के क्रोध का कारण समझ गया और घर से निकलकर एक ऐसे विद्वान आचार्य के घर पर चला आया जिसे लोग यमाचार्य के नाम से जानते थे। सारी बात तो समझाने के लिए कही जाती है। संयोग ऐसा बना कि जब नचिकेता यम के द्वार पर पहुँचा तो आचार्य कहीं बाहर गए हुए थे। उसे तीन दिन तक आचार्य के घर के बाहर इन्तजार करना पड़ा। तीन दिन पश्चात् जब आचार्य यम लौटे तो उन्होंने देखा कि एक अतिथि भूखा–प्यासा दरवाजे पर बैठा उनकी प्रतीक्षा कर रहा है। हमारी संस्कृति में अतिथि–सेवा को अत्यन्त महत्त्व प्राप्त है। यदि कोई मेहमान हमारे घर से भूखा–प्यासा चला जाए तो यह हमारे लिए अत्यन्त कष्टदायक होता है, किन्तु जो कुछ होना था वह तो हो चुका। आचार्य यम इस अनोखे अतिथि को कुछ पुरस्कार या वरदान देकर ही संतुष्ट कर सकते थे इसलिए उन्होंने नचिकेता से कहा, तुमने मेरे द्वार पर तीन रात तक मेरी प्रतीक्षा की है मैं तुम्हें तीन वरदान देता हूँ। तुम इन्हें माँगकर मेरी आत्मा को संतुष्ट करो। नचिकेता चाहे आयु में छोटा ही था, किन्तु था समझदार। उसने सबसे पहला वरदान तो यही माँगा कि मेरे पिता की नाराजगी दूर हो जानी चाहिए।

मेरी ही एक यथार्थ, किन्तु कठोर बात को सुनकर पिता वाजश्रवा नाराज हुए हैं। आचार्य ने इस वर

को स्वीकार किया और कहा कि चिन्ता मत करो। जब तुम यहाँ से लौटकर घर जाओगे तो पिता तुमसे प्रसन्न होकर ही मिलेंगे वैसे भी यथासमय सबका क्रोध दूर हो ही जाता है। अब दूसरा वर माँगने की बारी थी। नचिकेता ने यज्ञ के बारे में बहुत कुछ सुन रक्खा था। उसे यज्ञों के विधि–विधान के बारे में पूछना था। उसने यह सब पूछा। यज्ञ–विद्या के जानकार आचार्य यम ने भी उसे विस्तारपूर्वक सब कुछ बताया। अब रहा तीसरा प्रश्न या वरदान। यही सबसे महत्त्वपूर्ण था। नचिकेता सच्चा जिज्ञासु था। उसके मन में बार–बार यह प्रश्न उठता था कि जब मनुष्य की मृत्यु हो जाती है, तब क्या आत्मा का अस्तित्व ही समाप्त हो जाता है अथवा शरीर की मृत्यु के बाद भी कोई ऐसा तत्त्व है जो शेष रहता है? वास्तव में जीवात्मा और परमात्मा, मृत्यु और पुनर्जन्म, मोक्ष तथा परम शान्ति आदि ऐसे प्रश्न हैं जो सनातन हैं, अनादिकाल से मनुष्य के सामने रहे हैं, और विचारशील लोग आज भी जिनका समाधान जानने के इच्छुक रहते हैं।

जब नचिकेता ने ऐसा ही प्रश्न आचार्य से पूछा तो यम भी हक्के–बक्के रह गए। इतनी छोटी आयु का यह लड़का और ऐसा गूढ़ प्रश्न? उन्होंने बालक को बहलाने की चेष्टा की । उसकी परीक्षा लेनी चाही, क्या सचमुच इन प्रश्नों को लेकर नचिकेता इतना गम्भीर है? उन्होंने कहा, अरे भले मानस ! इन सवालों में क्या रक्खा है? आज तक दुनिया के बड़े–बड़े लोग इन आध्यात्मिक प्रश्नों का समाधान खोजते आए हैं, किन्तु वे किसी नतीजे पर नहीं पहुँचे। इससे तो अच्छा है कि तू सांसारिक धन, ऐश्वर्य और वैभव माँग ले। इस धन–सम्पत्ति से तुझे संसार के सभी लौकिक सुख प्राप्त हो जाएँगे। लोग तो धन की लालसा में मारे–मारे भटकते हैं। मैं तुझे यह सब देता हूँ। जीवन और मृत्यु, आत्मा तथा परमात्मा, मोक्ष और परलोक जैसे प्रश्नों की तेरे लिए क्या उपयोगिता है? किन्तु नचिकेता तो सच्चा जिज्ञासु था। उसने चट उत्तर दिया और कहा कि हे आचार्य, जिन भौतिक पदार्थों को देने की आप बात कर रहे हैं, वे सब तो नश्वर हैं। आज हैं, कल नहीं रहेंगे। मैं तो उन सदा रहनेवाले सवालों का जवाब चाहता हूँ, जिन्हें प्राप्त कर मनुष्य को सच्ची शान्ति प्राप्त होती है। जब आचार्य ने नचिकेता को सच्चा जिज्ञासु पाया तो उन्हें परम सन्तोष हुआ और वे उसे अध्यात्म विद्या का उपदेश देने लगे। उन्होंने बताया कि इस संसार में मनुष्य के लिए दो ही रास्ते हैं। वह चाहे तो श्रेय का मार्ग चुने अथवा प्रेय का। प्रेय का मार्ग तो साधारण जनों का है, जिसमें संसार की वस्तुओं को प्राप्त करने के लिए मनुष्य पुरुषार्थ करता है, किन्तु इन भोगों का कोई अन्त नहीं है। मनुष्य चाहे कितना ही धनवान और सम्पन्न बन जाए, उसकी लालसाओं का अन्त होनेवाला नहीं है। इसलिए अच्छा तो यही है कि हम सांसारिक भोगों को यथा आवश्यकता प्राप्त भले ही कर लें, उन्हें अपने जीवन का अन्तिम लक्ष्य न समझें।

मनुष्य को तो अपने जीवन का प्रमुख लक्ष्य ईश्वर–प्राप्ति ही रखना चाहिए। इसके लिए उसे श्रेय मार्ग को अपनाना चाहिए। परमात्मा के जिस यथार्थ रूप का वर्णन वेद, उपनिषद् आदि शास्त्रों में हुआ है, उसे जानकर मनुष्य अपने कर्तव्य में लगा रहे। इस प्रकार शास्त्रों और ऋषियों द्वारा कथित ब्रह्म विद्या को जानकर ही तत्त्ववेत्ता पुरुष संसार में शान्ति प्राप्त करता है, और मृत्यु के पश्चात् भी मोक्ष के आनन्द को प्राप्त करता है। आचार्य यम के इस उपदेश को सुनकर नचिकेता को परम सन्तोष प्राप्त हुआ और उसने श्रेय मार्ग पर चलने का निश्चय किया।

स्मृतिशेष भवानीलाल भारतीयकृत उपनिषदों की कहांनियां से साभार

यज्ञ एवं योग मनुष्य के आवश्यक कर्तव्य एवं मोक्ष प्राप्ति में सहायक

–मनमोहन कुमार आर्य

महर्षि दयानन्द जी ने वेदानुयायी आर्यों के पांच नित्यकर्म बताते हुए उसमें प्रथम व द्वितीय स्थान पर सन्ध्या एवं देवयज्ञ अग्निहोत्र को स्थान दिया है। प्राचीन ग्रन्थ मनुस्मृति में द्विजों को पंचमहायज्ञों को करने की अनिवार्यता का उल्लेख मिलता है। देवयज्ञ अग्निहोत्र एक ऐसा नित्य–कर्म है जिसका प्रतिदिन किया जाना गृहस्थ मनुष्य का कर्तव्य है। यज्ञ को अग्निहोत्र व हवन आदि नामों से भी जाना जाता है और इसकी विशेषता यह है कि यह अल्प समय साध्य है तथा इसे नित्य करने से इससे गृहस्थ एवं आसपास के लोगों को स्वास्थ्य आदि की उन्नति का लाभ होता है। यज्ञ से वायु एवं वृष्टि जल भी शुद्ध व पवित्र होता है। अग्निहोत्र में योग के आवश्यक अंग ईश्वर स्तुति, प्रार्थना व उपासना को भी स्थान दिया गया है। यद्यपि ऋषि दयानन्द जी ने दैनिक यज्ञ की जो विधि पंचमहायज्ञ विधि और संस्कारविधि पुस्तकों में दी हैं, वहां सम्भवतः दैनिक यज्ञ को अल्पकाल में सम्पन्न करने की दृष्टि से स्तुति–प्रार्थना–उपासना के आठ मंत्रों को स्थान नहीं दिया है तथापि आजकल जहां जो भी आर्य परिवार वा वैदिक धर्मी यज्ञ करता है, वह इन आठ मंत्रों का अवश्य ही उच्चारण व गान करते हैं। अधिकांश यज्ञकर्ताओं को इन मंत्रों के अर्थ भी ज्ञात होते हैं। ऋषि ने इन मंत्रों के हिन्दी अर्थ बोलने व सुनाने का निर्देश भी किया है। इन यज्ञों से ईश्वर की स्तुति–प्रार्थना–उपासना होने के साथ यज्ञ में जिन मंत्रों से आचमन, अग्न्याधान, समिधादान, पंचघृताहुति, जल सिचन आदि क्रियायें एवं अन्य आहुतियों सहित दैनिक यज्ञ के मंत्रों से आहुतियां दी जाती हैं, उनसे भी ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना व उपासना सम्पन्न होती है।

इससे योग की अनिवार्य शर्त ईश्वर की निकटता व उसकी प्राप्ति में सहायता मिलती है। ऋषि दयानन्द ने ईश्वर भक्ति अर्थात् ईश्वर की उपासना का फल बताते हुए कहा है कि इससे मनुष्य के गुण–कर्म–स्वभाव सुधरते हैं, ईश्वर की निकटता प्राप्त होती है और मनुष्य की आत्मा का बल इतना बढ़ता है कि पहाड़ के समान दुःख प्राप्त होने पर भी घबराता नहीं है। हमारा यह भी अनुमान है कि शारीरिक दुःख व क्लेशों में जितना कष्ट नास्तिक व सही रीति से ईश्वरोपासना न करने वालों को अनुभव होता है, ईश्वर की उपासना करने वालों को उससे कम प्रतीत होना अनुभव होता है। इससे प्रतीत होता है कि ईश्वर की भक्ति करने से मनुष्य की दुःखों को सहन करने की शक्ति में वृद्धि होती है।

मनुष्य के जीवन का उद्देश्य ईश्वर, जीवात्मा व प्रकृति के सत्य स्वरूप को जानना और ईश्वर की भक्ति व उपासना कर उसे प्राप्त करना है। ईश्वर ने जीवात्माओं के सुख भोग व विवेक प्राप्ति के लिए ही यह समस्त संसार बनाया है। इस समस्त संसार को बनाकर ईश्वर ने जीवों के लिए पृथिवी पर अग्नि, वायु, जल व अन्नादि अनेक उत्तमोत्तम पदार्थ बनाये हैं। परमात्मा ने जीवों के कर्म के अनुसार उन्हें मनुष्यादि शरीर सहित माता–पिता–भगिनी–बन्धु आदि अनेक संबंधी, परिवारजन व इष्ट–मित्र भी दिये हैं। परमात्मा ने मनुष्यों के कल्याण के लिए सृष्टि की आदि में

मनुष्यों को वेदों का ज्ञान भी दिया है जिससे इस सृष्टि के रहस्यों को जानने व समझने की योग्यता उत्पन्न होती है और साथ ही मनुष्य ईश्वर, जीव व प्रकृति को यथार्थ रूप में जान सकते हैं। इस कारण प्रत्येक मनुष्य ईश्वर का ऋणी हैं। इस ऋण से उऋण होना प्रत्येक मनुष्य का कर्तव्य है। इसी के लिए वेद व ऋषियों ने सन्ध्या अर्थात् सम्यक ध्यान=योग का विधान किया है। इसमें ईश्वर का उसके द्वारा किये गये उपकारों के लिए धन्यवाद करना मनुष्य का मुख्य कर्तव्य होता है। समस्त सन्ध्या योगानुष्ठान ही है। सन्ध्या में आचमन मंत्र में ईश्वर में सन्ध्या का उद्देश्य मनोवांछित आनन्द अर्थात् ऐहिक सुख–समृद्धि और पूर्णानन्द अर्थात् मोक्षानन्द की प्राप्ति को बताया गया है। सन्ध्या की समाप्ति पर नमस्कार मंत्र से पूर्व समर्पण मन्त्र में भी ईश्वर से धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष की प्राप्ति की कामना व प्रार्थना है। हम जानते हैं कि हम ईश्वर से जो भी प्रार्थना करें, उसकी पूर्ति के लिए हमें उसके अनुकूल कर्म व प्रयत्न भी करने होते हैं। ऐसा करने पर ईश्वर हमारी प्रार्थनाओं को पूरा करता है। अतः सन्ध्या करने से ईश्वर की निकटता व मनुष्य के गुण, कर्म व स्वभाव में सुधार होने के साथ ईश्वर का सहाय प्राप्त होता है।

सन्ध्या व योग का एक मुख्य अंग स्वाध्याय है। स्वाध्याय वेद एवं वैदिक साहित्य के अध्ययन, उसके चिन्तन व मनन सहित उसके अनुरूप आचरण को कहते हैं। स्वाध्याय से ईश्वर सहित अन्य विषयों के ज्ञान में भी वृद्धि होती है। स्वाध्याय भी एक प्रकार का योग व ईश्वर की उपासना ही है। ईश्वर का सत्यस्वरूप स्वाध्याय व वैदिक विद्वानों के उपदेश आदि से ही जाना जाता है। अतः स्वाध्याय भी हमें ईश्वर के निकट ले जाने व ईश्वर को जानने में सहायक होने से योग ही है। सन्ध्या को जान लेने व उसका नित्य प्रति सेवन करने के बाद ईश्वर के गुणों का निरन्तर ध्यान व धन्यवाद करना तथा स्वाध्याय किये गये विषयों के अनुरूप आचरण करना भी अनिवार्य रहता है। उसे करके हम निश्चय ही योग को सिद्ध कर सकते हैं। ऋषि दयानन्द समाधि को सिद्ध किये हुए योगी थे। उन्होंने उसी योग को सन्ध्या के माध्यम से प्रस्तुत किया है। इससे यह भी अनुमान होता है कि समाधि सिद्ध योगी होकर भी ऋषि दयानन्द इसी विधि से सन्ध्या वा ईश्वर का ध्यान आदि करते थे। यदि इससे अधिक व अन्य कुछ करते तो उसे भी वह पुस्तक रूप में अवश्य लिखते। अतः सन्ध्या ही वास्तविक योग है। सन्ध्या करके हम निश्चय ही योग करते हैं व निरन्तर अभ्यास कर व उसे बढ़ाते हुए समाधि प्राप्त कर ईश्वर का साक्षात्कार भी कर सकते हैं। हमारे जो संन्यासी और विद्वान हैं, वह सभी सन्ध्या के माध्यम से ही योग अर्थात् ईश्वर प्राप्ति के साधन व प्रयत्न करते हैं। सन्ध्या में भी यम, नियमों सहित योगासनों का अभ्यास, प्राणायाम आदि करना आवश्यक है।

यज्ञ श्रेष्ठतम कर्म है। यज्ञ में अग्निहोत्र सहित हमें परोपकार के सभी प्रकार के कर्म करने के साथ जीवन को सत्य व सादगी के अनुसार व्यतीत करना आवश्यक है। वेद ने सभी मनुष्यों के लिए त्यागपूर्वक भोग करने की आज्ञा की है। दूसरों का दुःख दूर करने के लिए सतत प्रयत्नशील रहना भी योगी के लिए आवश्यक है। योगेश्वर कृष्ण और ऋषि दयानन्द के जीवन में हमें यह दोनों महापुरुष समाज व देश के प्रति अपने कर्तव्यों को पूरा करते हुए दिखाई देते हैं। हमारे सभी प्राचीन ऋषि योगी थे और वह वनों में रहकर निरन्तर यज्ञादि कर्म करते रहते थे। योगी के लिए यज्ञ व अग्निहोत्र का विधान तो श्रुति ग्रन्थों में है, यज्ञ के त्याग का विधान वैदिक शास्त्र में कहीं नहीं है। हमारा यह भी अनुमान है कि यज्ञ करते हुए मनुष्य यदि योगाभ्यास करता है तो वह इससे शीघ्र सफल मनोरथ हो सकता है। आर्यसमाज व वैदिक धर्म से इतर मनुष्यजन भी योगाभ्यास करते हैं परन्तु बिना वेदों के स्वाध्याय

और सन्ध्या–यज्ञानुष्ठान भली प्रकार से न करने से उन्हें योग में ईश्वर साक्षात्कार की सिद्धि यज्ञ करने वाले साधको की तुलना में किंचित विलम्ब से मिलती है, ऐसा अनुमान होता है। यज्ञ करने से मनुष्य के पास शुभ कर्मों की एक बड़ी पूंजी संग्रहीत हो जाती है। यज्ञ से जितने अधिक प्राणियों को शुद्ध प्राणवायु व वर्षा जल की शुद्धि से ओषिधियों की शुद्धि व उनके प्रभाव में वृद्धि होती है, उससे उस यज्ञानुष्ठान करने वाली योगी व उपासक की कर्म–पूंजी इतर सभी योगाभ्यासियों से अधिक होने के कारण उसे शीघ्र योग के लाभों की प्राप्ति का होना निश्चित होता है। यज्ञ व अग्निहोत्र करना ईश्वर की आज्ञा भी है। अतः जो यज्ञ नहीं रकते वह ईश्वर की अवज्ञा करते हैं। यज्ञ योग, उपासना व ईश्वर की प्राप्ति में अत्यन्त सहायक एवं उपयोगी कर्म है। सभी योगाभ्यासियों को यज्ञ पर विशेष ध्यान देना चाहिये और दैनिक यज्ञ तो अवश्य ही करना चाहिये, ऐसा हम अनुभव करते हैं।

यज्ञ वह अनुष्ठान, वह प्रक्रिया है जिससे हम अपना व सहस्रों लोगों को शुद्ध प्राण वायु व वर्षा जल सहित आरोग्य फैलाकर उन्हें लाभ पहुंचाते हैं। योगाभ्यास करके हम अपनी आत्मा को ही ईश्वर से मिलाने का प्रयत्न करते हैं। योग व यज्ञ दोनों के लक्ष्य में इस दृष्टि से समानता है कि दोनों में ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना व उपासना होती है। विचार करने पर यह भी ज्ञात होता है कि यदि यज्ञ व योग दोनों का सहारा आध्यात्मिक व्यक्ति लेता है तो वह अपने लक्ष्य को शीघ्र प्राप्त कर सकता है। यदि व्यक्ति योगाभ्यास ही करे और यज्ञ की उपेक्षा करे तो उसे अपने लक्ष्य प्राप्ति में अधिक समय लग सकता है। गृहस्थ जीवन में यज्ञ करना एकाकी जीवन जीने वाले मनुष्य की तुलना में कुछ सरल लगता है। यज्ञ में अनेक परिवारजनों की सहायता प्राप्त होने से यज्ञ आसानी से होता है जबकि एकाकी जीवन जीनें वाले मनुष्य को यज्ञ करने में कुछ अधिक पुरुषार्थ करना पड़ता है। यज्ञ के साधन एकत्रित करने में भी उसे मृहस्थ व्यक्ति से अधिक पुरुषार्थ करना पड़ सकता है। महर्षि दयानन्द ने योग को सन्ध्या में ही सम्मिलित कर लिया है। महर्षि दयानन्द स्वयं एक उच्च कोटि के योगी थे। वह कई कई घण्टों की समाधियां लगाते थे। रात्रि जब सब सो जाते थे तब भी वह समाधि अवस्था में रहते थे। इससे अनुमान है कि उन्होंने ईश्वर का साक्षात्कार किया था। अतः उनका लिखा व कहा एक–एक शब्द योग व यज्ञ विषय में प्रमाण है। इस आधार पर उनसे प्राप्त सन्ध्योपासना व यज्ञ की विधियां उनकी मनुष्यजाति को अनुपम देन हैं। यह सन्ध्या विधि व उनके वेदभाष्य का स्वाध्याय मनुष्य को योग में प्रवृत्त कर उसे समाधि तक ले जाते हैं। सन्ध्या में प्रार्थना करते हुए उपासक कहता है कि मुझे मोक्ष व अन्य धर्म, अर्थ व काम की प्राप्ति सद्यः अर्थात् शीघ्र वा आज ही हो। यह बात विशेष महत्व रखती है। यही योग का लक्ष्य भी है। यज्ञ में स्विष्टकृदाहुति में भी सभी कामनाओं को पूर्ण करने की प्रार्थना की गई है। यह महत्वपूर्ण है कि महर्षि दयानन्द ने योग को सामान्यजनों के लिए सरल बनाया है। योगदर्शन का अध्ययन सन्ध्या करने वाले उपासक को लाभ पहुंचाता है। इससे योगाभ्यासी को साधना के अनेक पक्षों व उपायों का महत्व ज्ञात होता है। सन्ध्या को निरन्तर करने से मनुष्य समाधि की ओर अग्रसर होता है। ईश्वर प्राप्ति का मार्ग भी यही है। अतः यज्ञ एवं योग ईश्वर प्राप्ति के साधन हैं। दोनों परस्पर पूरक हैं और जीवन के अत्यावश्यक कर्म वा कर्तव्य हैं। इन्हें करने से ही मनुष्य का जीवन सार्थक व सफल होता है।

बाल्मीकि रामायण के वेदाधारित धर्म से आदर्श समाज का निर्माण

–डॉ० कृष्णकान्त वैदिक शास्त्री

भारत में वेद, उपनिषद्, दर्शन, गृहसूत्र आदि अनेक शास्त्रों में नीति के तत्त्वों का वर्णन किया गया है। एक प्रसिद्ध ग्रन्थ मनुस्मृति में में कहा गया है–

एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः।।

अर्थात् इसी ब्रह्मवर्त देश में उत्पन्न हुए विद्वानों के सानिध्य से पृथ्वी पर रहने वाले सब मनुष्य अपने–अपने आचरण अर्थात् कर्तव्यों की शिक्षा ग्रहण करें। मनुस्मृति में धर्म के धृति, क्षमा आदि दस लक्षण बताए गए हैं। यदि मनुष्य इन पर आचरण करते हुए जीवन बिताये तो सारे विश्व में शान्तिमय वातावरण पैदा कर समस्त मानव जाति को सुखी बनाया जा सकता है।

'नीति' शब्द की व्युत्पत्ति 'नीञ्' धातु से हुई है। जिसका शाब्दिक अर्थ है– ले जाना। नीति का अर्थ है मनुष्य के जीवन के लक्ष्य को प्राप्त करने के साधन–रूप नियम, जिन पर चल कर इस जीवन और परलोक (पुनर्जन्म) में कल्याण की प्राप्ति हो। आचार शिक्षा का सम्बन्ध व्यक्तिगत जीवन से है, जिसमें आत्मोन्नति पर बल दिया गया है। नैतिक शिक्षा में व्यक्ति के आचार–विचार की शुद्धि के साथ ही पारिवारिक, सामाजिक, राष्ट्रीय, वैश्विक और प्राणि मात्र से सम्बन्धित विषयों पर विचार किया जाता है। मनुष्य अपने–पराये, सजातीय–विजातीय, शत्रु–मित्र, परिचित–अपरिचित, आदि से किस प्रकार का व्यवहार करे यह नैतिक शिक्षा बताती है। इसके द्वारा समाज के प्रत्येक व्यक्ति का वास्तविक कल्याण होता है। नैतिक शिक्षा का मूल वेदों में मिलता है। 'सर्वं वेदात् प्रसिध्यति'– इस भारतीय सिद्धान्त से ज्ञात होता है कि अपौरुषेय वेदों से ही समस्त विद्यायें प्रादुर्भूत हुई हैं। वेदों में विधि और निषेध अर्थात् मनुष्यों के कर्तव्य और अकर्तव्य कर्म वर्णित हैं। वेदों के साथ ही ब्राह्मण ग्रन्थ, उपनिषद्, गीता, महाभारत, रामायण, पंचतन्त्र, विदुर, शुक्र, भर्तृहरि, आदि ऋषियों के नीति ग्रन्थों में इनका विस्तृत वर्णन है।

हम इस लेख में बाल्मीकि रामायण में वर्णित नैतिक मूल्यों का विवेचन करेंगे।

बाल्मीकिकृत रामायण भारतीय संस्कृति की एक अमूल्य धरोहर है। इसमें सामाजिक, राजनीतिक और अर्थनीति सम्बन्धी मूल्यों का वर्णन मिलता है। आदि कवि बाल्मीकि ने अपने इस काव्य में परिवार, समाज और राष्ट्र के सम्बन्ध में अनेक उत्कृष्ट मानदण्ड निर्धारित किये हैं। कथानक के नायक राम का चरित्र सत्य, दान, तप, त्याग, मैत्री, पवित्रता, करुणा और सरलता से परिपूर्ण है। केवल राम ही नहीं अपितु रामायण के अन्य पात्र भी नैतिकता के उच्च शिखर पर आरूढ थे। आज हम देखते हैं कि सारे विश्व में हिंसा, द्वेष, असंतोष, पाखण्ड, शंका, लोभ और अहिंसा का साम्राज्य है। ऐसे में यह कालजयी कृति विश्व के भटके हुए लोगों को सार्थक जीवन का पाठ पढ़ा सकती है। ऋग्वेद में कहा गया है– 'मनुर्भव जनया दैवं जनम अर्थात् मनुष्य मननशील बने और दिव्यगुण वाले पुत्र और शिष्य को उत्पन्न करें। इस प्रकार हमें सच्चे अर्थों में मनुष्य बनने के लिए संवेदनशील मानवता को स्वीकार करना आवश्यक है। निरुक्त में कहा गया है– 'मत्वा कर्माणि सीव्यतीति मनुष्यः' अर्थात् विवेकपूर्ण बुद्धि के अनुसार कार्य करने वाला सच्चे अर्थों में मनुष्य कहलाता है। बाल्मीकि रामायण नामक ग्रन्थ हमें सर्वत्र इसी मानवता का पाठ पढ़ाता नजर आता है। एक सच्चा मानव ही नैतिक मूल्यों का अनुपालन करता है। समाज के नियम हमें

कर्तव्याकर्तव्य का ज्ञान कराते हैं। वह हमें सचेत करते हैं कौन कर्म करणीय है और कौन सा कर्म अकरणीय है।

एक मनुष्य को सच्चे अर्थों में मनुष्य बनाने के लिए जिन सद्गुणों की आवश्यकता होती है, राम उन सबके समुच्चय हैं। वह पवित्रता, सरलता और क्षमाशीलता के गुणों के साथ–साथ सत्यवादी भी हैं–

सत्यं दानं तपस्त्यागो मित्रता शौचमार्जनम्।
विद्या च गुरुशुश्रुषा घ्रुवान्येतानि राघवे।।

राम महाधनुर्धर, वृद्धसेवी, जितेन्द्रिय, उदारचेता, दूसरों के सुख–दुःख के सहभागी और संवेदनशील व्यक्ति हैं। चरित्रवान् राम के द्वारा परिवार और समाज में व्यवहार करते समय मानो 'लोकं छिद्रं पृण' (यजु0 15.59) के सिद्धान्त को सामने रखकर लोक हितार्थ चिन्तन करते हुए सर्वदा ही वैयक्तिक स्वार्थ को दूर रखा गया है।

सामाजिक और पारिवारिक नैतिक मूल्य

रामायाण में एक ऐसे स्वस्थ समाज की संकल्पना है, जहाँ परस्पर प्रेम, सौहार्द और निश्छलता का साम्राज्य है। पारिवारिक नीति के निर्धारक तत्त्वों में मर्यादा और अनुशासन को सर्वोपरि रखा गया है। रामायण में पग–पग पर 'मातृदेवो भव, पितृदेवो भव आचार्यदेवो भव' के वैदिक विचार देखे जा सकते हैं। राम का तो अनन्य विश्वास है कि संसार में माता–पिता के वचनों का सम्मान करना परम धर्म है। रामायण व्यक्ति को पहले मनुष्य और उसके बाद सामाजिक बनाती है।

जिससे अभ्युदय धारण हो वह धर्म है और इस अभ्युदय को प्राप्त करने के लिए जो उपाय हैं, वे नीति कहलाते हैं, इस प्रकार देखा जाये तो दोनों का एक ही अर्थ होता है। कुछ लोग लौकिक अभ्युदय को प्राप्त करने के साधन को 'नीति' और पारलौकिक साधन को धर्म कहते हैं। नीति या नैतिकता से ही शास्त्र और धर्म प्रतिष्ठित होते हैं। नैतिकता के अभाव में शास्त्र और धर्म नष्ट हो जाते हैं। धर्मविहीन नैतिकता का कोई औचित्य नहीं है, भले ही यह आरम्भ में कुछ चमत्कारिक सफलता दिला दे परन्तु अन्ततोगत्वा वह पतन की ओर ही ले जायेगी। मनस्मृति में कहा गया है– 'धर्मो रक्षति रक्षितः' अर्थात् हमारे जीवन में जो स्वाभाविक धर्म और संयम रहता है, वह हमारी रक्षा करता है और जो हम धर्मपूर्वक आचरण या सदाचार करते हैं, वह धर्म हमारी रक्षा करता है। नीति या नैतिकता का मूल ही सदाचार है। धर्म की दृष्टि से नैतिकता के चार पाद हैं–सत्य, तप, दया और पवित्रता। इनमें सत्य को सर्वोपरि माना गया है। सामवेद में कहा गया है–'स्तुहि सत्यधर्माणाम अर्थात् सत्यनिष्ठ की प्रशंसा करे। मुण्डकोपनिष्द् में कहा गया है–

सत्यमेव जयति नानृतं सत्येन पन्था वितो देवयानः।
येनाक्रमन्त्यृषयो ह्याप्तकामा यत्र तत्सत्यस्य परमं निधानम्।।

अर्थात् सत्य की विजय होती है, असत्य की नहीं। सत्य धाम में गमन करते हैं जहां सत्य का वह परम आश्रय परमात्मा अनावृत रूप से स्थित है। तप का अर्थ है– पीड़ा सहना, घोर कड़ी साधना करना, मन का संयम रखना आदि। महर्षि दयानन्द के अनुसार ''जिस प्रकार सोने को अग्नि में डालकर इसका मल दूर किया जाता है उसी प्रकार सद्गुणों और उत्तम आचरणों से अपने हृदय, मन और आत्मा के मैल को दूर किया जाना तप है।

इन्हीं गुणों को रामायण के किस्किन्धा काण्ड में कहा गया है–

दमः शमः क्षमा धर्मो धृतिः सत्यं पराक्रमः।
पार्थिवानां गुणाः राजन् दण्डश्चाप्यपकारिषु।।

अर्थात् इन्द्रिय निग्रह, मनः संयम, क्षमा, धैर्य, सत्य, पराक्रम, अपराधियों को दण्डित करना राजा के कुछ प्रधान गुण हैं।

किस्किन्धा काण्ड में ही कहा गया है–

नयश्च विनयश्चौव निग्रहानुग्रहावपि।
राजवृत्तिरसंकीर्णः न राजा कामवृत्तयः।।

अर्थात् राजा में नैतिकता, नम्रता, निग्रह और

अनुग्रह चार गुण अनिवार्य हैं। यही नहीं जो राजा कर लेकर अपने प्रजा पालन रूपी धर्म का निर्वहन नहीं करता वह नरक का अधिकारी है।

दया की महिमा भी नैतिक कृत्यों के रूप में शास्त्रों में सर्वत्र मिलती है। तुलसीदास कहते हैं–

दया धर्म का मूल है, पाप मूल अभिमान।
तुलसी दया न छोड़िये जब लौं घट में प्राण।।

मनुष्यों को न केवल शरीर अपितु मन, बुद्धि और आत्मा को भी पवित्र रखना चाहिए। मनुस्मृति में कहा गया है–

अद्भिर्गात्राणि शुद्ध्यन्ति मनः सत्येन शुद्ध्यति।
विद्यातपोभ्यां भूतात्मा बुद्धिर्ज्ञानेन शुद्ध्यति।।

अर्थात् जल से शरीर के बाहरी अवयव, सत्याचरण से मन, विद्या और तप से जीवात्मा और ज्ञान या विवेक से बुद्धि निश्चित रूप से पवित्र होती है। मानव–जीवन में जो कुछ श्रेष्ठ और नैतिकतापूर्ण है, उसके पीछे विवेक विद्यमान होता है। नीति बोध से जब धर्म का उदय होता है तो मनुष्य अपनी अपूर्णता के प्रति जागरूक हो जाता है। व्यक्तित्व का आध्यात्मिक विकास दिव्य जीवन का शिलान्यास है जो नीतिबोध पर निर्भर रहता है। नीतिबोध की सार्थकता भी दिव्य जीवन की ओर अग्रसर होने में ही है। आदि कवि बाल्मीकि ने राम के माध्यम से उन चौदह दोषों को गिनाया है जो एक राजा के लिए त्याज्य हैं–

नास्तिक्यमनृतं क्रोधं प्रमादं दीर्घसूत्रताम्।
अदर्शनं ज्ञानवतामालसयं पन्चवृतिाम्।।
एकचिन्तनमर्थानामनर्थज्ञैश्च मन्त्रणाम्।
निश्चितानामनारम्भं मन्त्रस्यापरिरक्षणम्।।
मंगलाद्यप्रयोगं च प्रत्युत्थानं च सर्वतः।
कच्चित्वं वर्जयस्येतान् राजदोषांश्चतुदर्श।।

अर्थात् नास्तिकता, असत्य भाषण, क्रोध, प्रमाद, दीर्घ सूत्रता (टालमटोल), सज्जनों से न मिलना, इन्द्रियों की परवशता, मंत्रियों की अवहेलना कर अकेले ही राज्य सम्बन्धी बातों पर विचार करना, अशुभ चिन्तकों अथवा उल्टी बात समझाने वाले मूर्खों से परामर्ष करना, निश्चित मंगल कृत्यों का त्याग, नीच–ऊँच सबको देख खड़े होना, शत्रुओं का एक साथ आक्रमण– इन चौदह दोषों को क्या तुमने त्याग दिया है? ये सूत्र वास्तव में ऐसे हैं, जिनका आज भी कुशल राजनीतिज्ञों और शासकों द्वारा पालन किया जाना चाहिए। इस प्रकार बाल्मीकि रामायण में न केवल नीति अपितु राजनीति का भी सम्यक् ज्ञान दिया गया है।

सम्पूर्ण विश्व में भारत जैसे धर्माधारित नैतिक मूल्यों का विशाल भण्डार नहीं है और न ही आज की ज्वलन्त समस्याओं को दूर करने हेतु कोई दूसरा मार्ग है। केवल वैदिक सनातन नैतिक पद्धतियों से ही विश्व का कल्याण सम्भव है। यदि अपने नैतिक मूल्यों को सुरक्षित रखना है तो हमें बाल्मीकि रामायण आदि उपरोक्त शास्त्रों से प्रेरणा लेनी होगी। सबसे पहले स्वयं को सुधारते हुए सत्य, प्रेम, दया, अहिंसा, निरव्यसन, जितेन्द्रियता, अक्रोध, अलोभ, परोपकारिता आदि सद्गुणों को अपनाना होगा। नैतिकता के प्रारम्भिक संस्कार माता की गोद से ही बनते हैं। माता की शिक्षा, उसके आदर्श संस्कार और घर का वातावरण बच्चों के कोमल मन का विकास करने में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। माता–पिता और आचार्य बालक/बालिकाओं के आदि गुरु होते हैं, वे इन आदर्शों को संस्कार रूप में बच्चें में स्थापित करें क्योंकि मनुष्य जीवन की विकासधारा उसके शैशव–कालीन अनुभवों से निर्धारित मार्ग का ही अनुसरण करती है। धर्म, संस्कृति और इतिहास से बच्चों को उपदेशात्मक कथाएं सिखलायी जानी चाहिएं जिसे उनमें ईश्वर भक्ति और समर्पण की भावनायें विकसित हों। इस प्रकार की शिक्षा से युवा पीढ़ी में मनसा–वाचा–कर्मणा सत्प्रवृत्तियों का विकास हो सकेगा। यह उनके चरित्र निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएंगी और उनमें सत्य, दया, त्याग तप, विनय, न्याय–प्रियता और राष्ट्र प्रेम आदि के गुण विकसित होंगे। प्राचीन परम्परागत नैतिक मूल्यों को पुनः स्थापित करके ही हम विश्व में एक आदर्श और समृद्ध समाज का निर्माण कर सकते हैं।

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी द्वारा प्रदत्त-योगाभ्यास उपासना प्रकार

- पं उम्मेद सिंह विशारद, वैदिक प्रचारक

संमाधि निर्धूत मलस्य चेतसो
निवेशतत्यात्मनियत्सुखं भवेत-।

न शैक्यते वर्णयतुं गिरा तदा स्वयं तदन्तः करणेन गह्वते-।। (उपनिषद)

जिस पुरुष के समाधि योग से अविद्यादिमल नष्ट हो गये हैं आत्मस्थ होकर परमात्मा में चित्त जिसने लगाया है। उसको जो परमात्मा के योग का सुख होता है, वह वाणी से कहा नही जा सकता क्योंकि उस आनन्द को जीवात्मा अपने अन्तःकरण से ग्रहण करता है।

सर्वदा सत्य शास्त्रों को पढ़े पढ़ावें। सतपुरुषों का संग करे और ''ओउम्'' इस एक परमात्मा के नाम का अर्थ विचार करें, नित्यप्रति जप किया करें। अपने आत्मा को परमेश्वर की आज्ञानुकूल समर्पित कर देवें।

जब उपासना करना चाहें तब एकान्त शुद्ध देश में आसन लगा प्राणायाम कर वाह्य विषयों से इन्द्रियों को रोक मन को नाभि प्रदेश में वा हृदय, कंठ, नेत्र, शिखा अथवा पीठ के मध्य किसी हाड़ में किसी स्थान पर स्थिर कर अपने आत्मा और परमात्मा का विवेचन करके परमात्मा में मग्न होकर सयंमी होवें।

जब इन साधनों को करता है तब उसका आत्मा और अन्तःकरण पवित्र होकर सत्य से पूर्ण हो जाता है। नित्य प्रति ज्ञान विज्ञान बढ़कर मुक्ति तक पहुँच जाता है। जो आठ पहर में एक घड़ी भी इस प्रकार ध्यान करता है वहा सदा उन्नति को प्राप्त हो जाता है।

जो सर्वज्ञादि गुणों के साथ परमेश्वर की उपासना करनी सगुण और राग द्वेषादि रुप रस गन्ध स्पर्शादि से पृथक मानकर अति सूक्ष्म आत्मा के भीतर बाहर व्यापक परमेश्वर में दृढ़ स्थिति हो जाना निगुणोपासना कहलाती है।

इसका फल जैसे शीत से अतुर पुरुष का अग्नि के समीप शीत निवृत हो जाता है। वैसे परमेश्वर के होने से सब दोष दु:ख छूटकर परमेश्वर के गुर्ण कर्म स्वभाव के सदृश जीवात्मा के गुण कर्म स्वभाव पवित्र हो जाते हैं। इसलिए ही परमेश्वर की स्तुति प्रार्थना-उपासना अवश्य करनी चाहिए। इससे इसका फल पृथक होगा परन्तु आत्मा का इतना बल बढ़ेगा कि वह पर्वत के समान दु:ख आने पर भी न घबरायेगा और सबको सहन कर सकेगा। क्या यह छोटी बात है।

ईश्वर की स्तुति-प्रार्थना-उपासना प्रकार

ईश्वर की स्तुति-वह परमात्मा सबको व्यापक शीध्रकारी और अनन्त बलवान जो शुद्ध सर्वज्ञ सबका अन्र्तयामी, सर्वोपरि, विराजमान, सनातन, स्वयंसिद्ध परमेश्वर अपनी जीवरुप सनातन अनादि प्रजा को अपनी सनातन विद्या से यथावत अर्थो का बोध वेद द्वारा करता है। यह सगुण स्तुति अर्थात जिस गुण से सहित परमेश्वर की स्तुति करना वह सगुण और (अकाय) अर्थात वह कभी शरीर धारण व जन्म नही लेता, जिससे छिद्र नही होता और तो नाड़ी आदि के बन्धन में नही आता और कभी पापाचरण नही करता। जिसमें क्लेश दु:ख अज्ञान कभी नही होता इत्यादि जिस-जिस राग

द्वेषादि गुणों से पृथक मानकर परमेश्वर की स्तुति करना है। यह निर्गुण स्तुति कहलाती है जो केवल भांड के समान परमेश्वर के गुण कीर्तन करता जाता और अपने चरित्र नही सुधारता उसका स्तुति करना व्यर्थ है।

प्रार्थना: जिस-जिस दोष वा दुर्गुण से परमेश्वर और अपने को भी पृथक मान के प्रार्थना की जाती है वह विधि निषेध मुख होने से सगुण निर्गुण प्रार्थना। जो जिस बात की प्रार्थना करता है उसको वैसा ही वर्तमान करना चाहिए अर्थात जैसे सर्वोत्तम बुद्धि की प्राप्ति के लिए परमेश्वर की प्रार्थना करें। उसके लिए जितना अपने से प्रर्यत्न हो सके उतना किया करें। अर्थात अपने पुरुषार्थ के उपरान्त प्रार्थना करनी योग्य है।

उपासना: जो उपासना का आरम्भ करना चाहे उसके लिए यही आरम्भ है कि वह किसी से वैर न रखे सर्वदा प्रीति करे। सत्य बोले, मिथ्या न बोले, सत्य व्यवहार करें। जितेन्द्रिय हो, लम्पट न हो। और निरभिमानी हो, अभिमान कभी न करे। पांच प्रकार के यम मिल के उपासना योग का प्रथम अंग है।

ओंकार का स्वरुप

(ओ३म्) जो यह ओंकार शब्द है वह परमेश्वर का सर्वोत्तम नाम है क्योंकि जो अ, उ, म, तीन अक्षर है वे मिलके एक ''ओउम्'' समुदाय हुआ है। इस एक से परमेश्वर के बहुत नाम आते हैं जैसे- अकार से विराट अग्नि और विश्वादि। उकार से हिरण्यगर्भ, वायु और तैजसादि। मकार से ईश्वर आदित्य और प्राज्ञादि नामों का वाचक और ग्राहक है। उसका ऐसा वेदादि सत्य शास्त्रों में स्पष्ट व्याख्यान किया है कि प्रकरणानुकूल से सब नाम परमेश्वर के ही हैं।

ईश्वर भक्ति की अनिवार्यता

जो गरीब और बलहीन होने पर भी ईश्वर की स्तुति प्रार्थना उपासना नही करते और दु:ख आने पर भी उससे पुकार नही करते वे सदा बलवानों के आहार ही बने रहते हैं, और उन्हे बलवान सदैव खाते रहते हैं। जो धनवान और बलवान होते हुए भी ईश्वर की स्तुति प्रार्थना उपासना नही करते और महान सुख मिलने पर भी उसको याद नही करते उनका धन और बल अस्थायी हो जाता है। वह कुछ ही समय में उसके पास नही रहेगा। अत: ईश्वर भक्ति सबके लिऐ आहार से भी आवश्यक है जहां आहार के बिना कोई जीवित नही रहता उसी प्रकार भक्ति के बिना भी जीवित नहीं रहेगा। यह निश्चय जानो।

ईश्वर का साक्षात्कार कैसे

जैसे कारण से कार्य का ज्ञान होता है वैसे ही गुण से गुणी का ज्ञान प्राप्त हो जाता है। अन्य इसकी प्राप्ति का कोई कारण नही है। तृण से पृथ्वी पर्यन्त पृथ्वी से परमेश्वर पर्यन्त सकल ज्ञान प्राप्त हो जाता है। कारण से कार्य का ज्ञान और गुणों से गुणी का ज्ञान की परम प्रत्यक्ष ज्ञान है। यही सब वैदिक दर्शनों का सिद्धान्त है। उसी से सब कुछ प्रत्यक्ष किया जाता है।

ईश्वर का व्याप्य व्यापक सम्बन्ध

ईश्वर प्राप्ति में जैसे कोई गर्म लोहे को पकड़े तो अग्नि और लोहा दोनों पकड़ में आते हैं। कोई यह नही कह सकता है कि मैं अग्नि को ही पकड़ रहा हूँ लोहे को नही और यह भी नही कह सकता कि मैं लोहे को ही पकड़ रहा हूँ अग्नि को नही। जिस प्रकार अग्नि और लोहे की एकता है ठीक उसी प्रकार से ईश्वर और जीव की एकता है, दोनों में व्याप्य और व्यापक का नित्य सम्बन्ध है। एक की प्राप्ति में दोनों की प्राप्ति होती है। परन्तु इन दोनों में लोहा और जीव मुख्य आधार है। जैसे लोहे के आश्रित अग्नि की प्राप्ति होती है ठीक उसी प्रकार से जीव के आश्रित ईश्वर की प्राप्ति होती है। बिना आत्म ज्ञान के ईश्वर ज्ञान सम्भव नही है। जो अपनी आत्मा में व्यापक परमात्मा को देख लेता है वह संसार में व्यापक ब्रह्मं को देख लेता है। जो ऐसा करने में समर्थ नही है वह परमात्मा के दर्शन करने में समर्थ नही होगा।

आर्यसमाज के महाधन

आर्यसमाज के उज्जवल रत्न थे पं. लोकनाथ तर्कवाचस्पति

–मनमोहन कुमार आर्य

पं. लोकनाथ तर्कवाचस्पति जी मूलतः सिंध प्रान्त के निवासी थे, परन्तु आपका प्रचार क्षेत्र पंजाब रहा। आप आर्य प्रादेशिक सभा पंजाब के उपदेशक भी रहे। वह अद्वितीय व्याख्याता, तर्कनिष्णात शास्त्रार्थ महारथी तथा कर्मकाण्ड प्रेमी भावुक विद्वान् थे। आपने पौराणिकों तथा अन्य विधर्मी विद्वानों से अनेक शास्त्रार्थ किये। पौराणिक आस्थाओं पर इनके प्रहार बड़े तीखे एवं तिलमिला देने वाले होते थे। डा. भवानीलाल भारत जी ने लिखा है कि 'पं. लोकनाथ जी को प्रसिद्ध पौराणिक विद्वान् पं. माधवाचार्य तथा पं. अखिलानन्द शर्मा से शास्त्रार्थ करते नवम्बर, 1953 में डीडवाना (राजस्थान) में देखा था। उनका स्वाध्याय कितना गूढ़, शास्त्रार्थ शैली कितनी रोचक और प्रभावपूर्ण थी, यह देखते ही बनता था।' उक्त शास्त्रार्थ में माधवाचार्य ने मृतक श्राद्ध को वैदिक तथा ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों को अवैदिक सिद्ध करना चाहा परन्तु पं. लोकनाथ जी के तर्कपूर्ण प्रश्नोत्तर से विपक्षी पण्डित के छक्के छूट गये। एक बार तो संस्कारविधि के श्राद्ध प्रकरण में उल्लिखित सव्य–अपसव्य प्रकरण के विषय में पं. माधवाचार्य के गलत बयानी करने पर पं. लोकनाथजी ने उसे जिस प्रकार ललकार कर चुनौती दी, उससे पं. माधवाचार्य का चेहरा फक्क हो गया तथा उपस्थित जनता को पौराणिक मत की निर्बलता स्पष्ट रूप से मालूम हो गई।

पं. लोकनाथ केवल शास्त्रार्थ समर के शूरसेनापति ही नहीं थे, उन्होंने आर्यजीवन पद्धति को अपने व्यक्तिगत जीवन में साकार रूप में ढाला था। अपने प्रवचनों में वे सन्ध्या, स्वाध्याय, सत्संग, संस्कार आदि पंचसकारों के क्रियात्मक आचरण पर जोर देते थे। उनकी कथनी और करनी में कोई अन्तर नहीं था। उन्होंने 'भक्त गीता' नामक पुस्तक लिखी है जिसमें आर्यों के दैनन्दिन कर्मकाण्ड का संग्रह किया है। ऋषि दयानन्द के प्रति उनकी भक्ति प्रगाढ़ थी। 'ऋषि चालीसा' लिख कर उन्होंने महर्षि को अपनी काव्यपूर्ण श्रद्धांजलि अर्पित की थी। 'पूजनीय प्रभो हमारे भाव उज्जवल कीजिए' यज्ञ–प्रार्थना उनकी प्रसिद्ध काव्य रचना है जो आज आर्यसमाज में सर्वत्र प्रचलित हो गई है। सभी याज्ञिक यज्ञ के पश्चात इस प्रार्थना का समवेत स्वरों से उच्चारण व पाठ करते हैं। आर्यसमाज लाहौर छावनी में उनका एक शास्त्रार्थ पौराणिकों से हुआ था।

देश विभाजन से पूर्व पं. लोकनाथजी का कार्यक्षेत्र पंजाब, सिंध तथा सीमाप्रान्त रहा, परन्तु विभाजन के पश्चात् आपने दिल्ली के दीवान हाल आर्यसमाज को अपना केन्द्र बनाया था। सुप्रसिद्ध क्रान्तिकारी देशभक्त अमर शहीद सरदार भगतसिंह का यज्ञोपवीत संस्कार पं. लोकनाथ जी के करकमलों से ही हुआ था। 1957 ई. में आपका स्वर्गवास हो गया। यह भी बता दें कि 13 जनवरी, 1949 को जन्मे अन्तरिक्ष यात्री विंग कमाण्डर राकेश शर्मा पं. लोकनाथ तर्कवाचस्पति जी के पौत्र हैं। वह दिनांक 3–4–1984 को सोवियत रूस के अन्तरिक्ष यान सोयूज टी–11 में अन्तरिक्ष में गये थे और 7 दिनों तक अन्तरिक्ष में रहे थे। शर्मा जी दिल्ली में रहते हैं तथा आर्यसमाज के सत्संगों में प्रायः आते जाते हैं।

हमने इस लेख की सामग्री डा. भवानीलाल भारतीय जी की पुस्तक शास्त्रार्थ महारथी से लेकर साभार प्रस्तुत की है। हम पं. लोकनाथ तर्कवाचस्पति जी को सश्रद्ध नमन करते हैं।

ओ३म्

वैदिक साधन आश्रम

तपोवन, नालापानी, देहरादून

द्वारा आयोजित

ग्रीष्मोत्सव

बुधवार, 11 मई 2022 से
रविवार, 15 मई 2022 तक

आर्य समाज के संस्थापक,
वेदों के उद्धारक एवं युग प्रवर्तक

महर्षि दयानन्द सरस्वती

(1825–1883)

आश्रम सोसाइटी के सदस्यगण : विजय कुमार आर्य, ई. प्रेम प्रकाश शर्मा, आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य, स्वामी चित्तेश्वरानन्द जी, सुधीर कुमार माटा, श्याम आर्य, विक्रम बावा, योगेश मुंजाल, डॉ. शशि वर्मा, महेन्द्र सिंह चौहान, योगराज अरोड़ा, कुलदीप चौहान, विनीश आहुजा, अशोक वर्मा ।

कार्यक्रम के प्रमुख सहयोगी : रणजीत राय कपूर, जीतेन्द्र तोमर, रमेश चन्द, सुशील कुमार भाटिया, प्रेमसिंह।

Email : vaidicsadanashram88@gmail.com   Web : www.vaidicsadhanashramdehradun.com

ग्रीष्मोत्सव, योग साधना एवं अथर्ववेद यज्ञ

बैशाख शुक्ल दशमी से वैशाख सुदि चतुर्दशी विक्रमी सम्वत् 2079 तक तद्नुसार बुधवार 11 मई से रविवार 15 मई 2022 तक मनाया जायेगा।

योग साधना निर्देशक एवं यज्ञ के ब्रह्मा	:	**स्वामी चित्तेश्वरानन्द जी सरस्वती**
वैदिक विद्वान	:	आचार्य डा0 वागीष जी, पं. उमेश चन्द्र कुलश्रेष्ठ जी, स्वामी योगेश्वरानन्द सरस्वती जी, डॉ0 धन्नजय जी, आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य, डॉ0 सुखदा सोलंकी जी, आचार्य डा0 अन्नपूर्णा जी, पं. सूरत राम शर्मा जी, पं. वेद वसु शास्त्री जी, श्रीमती सुरेन्द्र अरोड़ा जी
वेद पाठ	:	श्रीमद दयानन्द आर्ष ज्योर्तिमठ गुरूकुल पौंधा के ब्रह्मचारियों द्वारा
यज्ञ तथा अन्य कार्यक्रमों के संचालक	:	पंडित सूरतराम शर्मा जी, श्री शैलेश मुनि सत्यार्थी जी एवं डॉ. अनिल आर्य जी
भजनोपदेशक	:	श्री कुलदीप आर्य जी, पं आर्यमुनि जी एवं श्रीमती मीनाक्षी पंवार जी

बुधवार 11 मई से रविवार 15 मई 2022 तक प्रतिदिन	
योग साधना : प्रातः 4.00 से 6.00 बजे तक	यज्ञ एवं संध्या : सायं 3.30 से 6.00 बजे तक
संध्या एवं यज्ञ : प्रातः 6.30 से 8.30 बजे तक	भजन एवं प्रवचन : रात्रि 07.30 से 09.30 बजे तक
भजन एवं प्रवचन : प्रातः 10 से 12 बजे तक	

बुधवार दिनांक 11 मई 2022

ध्वजारोहण	:	प्रातः 9:00 बजे – श्री उमेश शर्मा 'काऊ' जी के करकमलों से
यज्ञ के यजमान	:	श्री विजय सचदेवा एवं परिवार
कार्यक्रम के अध्यक्ष	:	श्री चन्द्रगुप्त विक्रम जी
प्रवचन विषय प्रातः	:	महर्षि दयानन्द एवं आर्यसमाज
प्रवचन विषय सायं	:	विश्व में नवजागरण के पुरोधा महर्षि दयानन्द

युवा सम्मेलन – गुरूवार दिनांक 12 मई 2022

कार्यक्रम के अध्यक्ष	:	डा० कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री
कार्यक्रम के संचालक	:	आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य
भजन	:	श्री कुलदीप आर्य जी
प्रवचन विषय प्रातः	:	पाश्चात्य संस्कृति के आक्रमण से युवाओं की रक्षा के उपाय
प्रवचन विषय सायं	:	तनाव रहित जीवन जीने की कला

महिला सम्मेलन – शुक्रवार, दिनांक 13 मई 2022

मुख्य अतिथि	:	श्रीमती मीना अग्रवाल जी
कार्यक्रम की अध्यक्ष	:	श्रीमती सुरेन्द्र अरोड़ा जी
भजन	:	श्रीमती मीनाक्षी पंवार जी एवं द्रोणस्थली आर्ष कन्या गुरूकुल की ब्रह्मचारिणियाँ
प्रवचन विषय प्रातः	:	वैदिक संस्कृति के अनुपालन से ही नारी जाति का सम्मान एवं सर्वांगीण विकास सम्भव
सांयकाल विषय सांय	:	दान प्रकृति का ऋत नियम है

योग एवं उपासना सम्मेलन – शनिवार, 14 मई 2022

कार्यक्रम के अध्यक्ष	:	स्वामी चित्तेश्वरानन्द सरस्वती जी
भजन	:	श्री कुलदीप आर्य जी, पं0 आर्यमुनि जी
प्रवचन विषय प्रातः	:	दैनिक जीवन में ध्यान की आवश्यकता
सांयकाल भजन संध्या	:	श्री कुलदीप आर्य जी एवं श्रीमती मीनाक्षी पंवार जी

नोटः शनिवार को प्रातः कालीन यज्ञ एवं भजन प्रवचन के कार्यक्रम तपोभूमि (पहाड़ी पर) आयोजित किये जायेंगे।

समापन समारोह – रविवार, 15 मई 2022

समापन समारोह	:	प्रातः 10:00 से 1:00 बजे तक
मुख्य अतिथि	:	मुख्यमंत्री श्री पुष्कर सिंह धामी जी
विशिष्ट अतिथि	:	स्वामी यतीश्वरानन्द जी
सभाध्यक्ष	:	श्री विजय कुमार आर्य जी, अध्यक्ष तपोवन आश्रम, देहरादून
कार्यक्रम संचालक	:	डॉ. अनिल आर्य जी
अतिथियों का स्वागत	:	इं0 प्रेम प्रकाश शर्मा (सचिव तपोवन आश्रम),
भजन	:	श्री कुलदीप आर्य जी, पंडित आर्यमुनि जी, श्री रमेशचन्द्र स्नेही जी
पुस्तक विमोचन	:	श्री वीरेन्द्र राजपूत द्वारा रचित ऋग्वेद के प्रथम दशांश मंत्रों का काव्यांश
सम्बोधन	:	अतिथियों द्वारा सम्बोधन
धन्यवाद ज्ञापन	:	आश्रम के अध्यक्ष श्री विजय कुमार आर्य जी द्वारा धन्यवाद ज्ञापन
ऋषिलंगर	:	समापन समारोह के उपरान्त ऋषिलंगर की व्यवस्था

आश्रम की गतिविधियां

1. पिछले 72 वर्षों से प्रातः कालीन एवं सायं कालीन यज्ञ।
2. प्रतिवर्ष 5 दिवसीय ग्रीष्मोत्सव (मई माह) एवं शरदुत्सव (अक्टूबर माह)।
3. प्रतिवर्ष मार्च माह में चतुर्वेद पारायण यज्ञ अथवा गायत्री यज्ञ।
4. मई-जून माह में युवक एवं युवतियों के लिए बौद्धिक विकास शिविर।
5. प्राकृतिक चिकित्सा शिविरों का निरंतर आयोजन।
6. तपोवन विद्या निकेतन जूनियर हाई स्कूल का सफल संचालन।
7. साधु-सन्यासियों, वानप्रस्थियों तथा ब्रह्मचारियों के लिए निःशुल्क चिकित्सा।
8. गौवंश संवर्धन हेतु गौशाला का संचालन।
9. पिछले 34 वर्षों से पवमान मासिक पत्रिका का प्रकाशन।
10. निकट भविष्य में पूर्णकालिक प्राकृतिक चिकित्सा केन्द्र विकसित करने की योजना बनाई गई है जिसके लिए दो-दो कमरों वाली 6 कुटिया उपलब्ध हैं जिनका जीर्णोद्धार अपेक्षित है। इसके अतिरिक्त कुछ नवीन कक्षों का निर्माण भी करना आवश्यक होगा। यह निर्णय लिया गया है कि प्राकृतिक चिकित्सा केन्द्र के संचालन के लिए तपोवन सोसायटी (रजि.) के सहयोग एवं मार्गदर्शन के लिए संस्थापक सदस्य (पांच लाख रुपए दान देने वाले) तथा संरक्षक सदस्य (एक लाख रुपए दान देने वाले) बनाये जायेंगे। इन सभी सदस्यों के लिए प्राकृतिक चिकित्सा की निःशुल्क सुविधा उपलब्ध रहेगी।

आंमत्रित वैदिक विद्वान एवं अतिथिगण

डॉ. नवदीप जी, डॉ. कृष्णकान्त वैदिक शास्त्री जी, श्री मनमोहन आर्य जी, श्री एस.एस. वर्मा जी, श्री गोविन्द सिंह भण्डारी जी, श्री दयाकृष्ण कांडपाल जी, श्री ओमप्रकाश मलिक जी, श्री सुधीर गुलाटी जी, डॉ. महेश कुमार शर्मा, श्री राजकुमार भण्डारी जी, श्री महावीर सिंह जी, श्री अतर सिंह जी, श्री अजय त्यागी जी, श्री धर्मपाल शर्मा जी, श्री तीरथ कुकरेजा जी, श्री संजय जैन जी, श्री पंकज त्यागी जी, श्री नरेन्द्र वर्मा जी, श्री रामपाल रोहिला जी, श्री अरविन्द शर्मा जी, श्री दयानन्द तिवारी जी, डॉ. बृजपाल आर्य जी, श्री नरेन्द्र साहनी जी, श्री ओमप्रकाश महेन्द्रू जी, श्रीमती कान्ता काम्बोज जी, श्री ज्ञानचन्द गुप्ता जी, श्री भगवान सिंह जी, श्री शत्रुघन कुमार मौर्य जी, श्री जीतेन्द्र सिंह तोमर जी, श्री महिपाल सिंह जी, श्री रमेश भारती जी, श्री उम्मेद सिंह विशारद जी, श्री रणजीत राय कपूर जी, श्रीमती ऊषा जी, डॉ. विश्वमित्र शास्त्री जी, श्री ओमप्रकाश अग्रवाल जी, श्री मानपाल सिंह जी, श्री दिनेश आर्य जी, श्री हाकम सिंह जी, श्रीमती पुष्पा गुसाईं, श्री वेद प्रकाश धीमान जी, श्री प्रदीप दत्ता जी, श्री पी.डी. गुप्ता जी, श्री केसर सिंह जी, श्री रतन सिंह जी, श्री महिपाल सिंह त्यागी जी, श्री रामबाबू सैनी जी, श्रीमती सविता अग्रवाल जी, श्री बृजेश शर्मा जी, श्री चन्द्रगुप्त विक्रम जी, श्री यशवीर आर्य जी, डा आनन्द सुमन जी, श्रीमती मीना अग्रवाल जी, श्री सिद्धार्थ अग्रवाल जी एवं सभी आर्यसमाजों के प्रधान, मंत्री एवं कोषाध्यक्ष

ग्रीष्मोत्सव के कार्यक्रम में आप सपरिवार सादर आमंत्रित हैं।

निवेदक

विजय कुमार आर्य, ई. प्रेम प्रकाश शर्मा, आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य, स्वामी चित्तेश्वरानन्द जी, सुधीर कुमार माटा, श्याम आर्य, विक्रम बावा, योगेश मुंजाल, डॉ. शशि वर्मा, महेन्द्र सिंह चौहान, योगराज अरोड़ा, कुलदीप चौहान, विनीश आहुजा, अशोक वर्मा, रणजीत राय कपूर, जीतेन्द्र तोमर, रमेश चन्द, सुशील कुमार भाटिया, प्रेमसिंह

एवं समस्त सदस्य वैदिक साधन आश्रम सोसायटी, देहरादून।

जीवन का आधार नारी का संस्कार

–**आचार्य विजयपाल आर्य** (आर्य निर्मात्री सभा उत्तराखण्ड)

अध्यापक, अभियंता, चिकित्सक, अभिनेता, नर्तक, प्रबंधक सब के लिये योग्य प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है। उन्हें विद्यालय से लेकर विश्व विद्यालय पर्यन्त कई प्रकार का प्रशिक्षण दिया जाता है। उन्नत हवाई जहाज, टेलिविजन, कम्प्युटर, गाय, घोड़ा, आम, गेहुं आदि के विकास हेतु अनुसंधान किया जाता है। मनुष्य अपने उपयोग की सभी वस्तुओं और जीवों को उन्नत करता जा रहा है, परंतु स्वयं को श्रेष्ठ बनाने की कोई योजना उसके पास नही है। भगवती वेदमाता ने उद्घोष किया है– ''मनुर्भव जनया दैव्य जनम''– तुम मनुष्य हो तो मनुष्य के गुणों को भी अपनाओ और उत्तम मनुष्य होकर देवताओं को जन्म दो। अतः कोई जड़ पदार्थ अथवा मनुष्येतर जीव देवों को पैदा नही कर सकता।

संसार के सभी मनुष्य माँ से ही जन्म लेते हैं। नारी ही संतानों की जननी, पोषिका और पालिका है। प्रशिक्षण केंद्रों में अभियंता, चिकित्सक, प्रबंधक आदि प्रशिक्षित किये जाते हैं। परंतु सदाचार, शिष्टाचार और नैतिकता की शिक्षा का एक मात्र प्रशिक्षण केंद्र माँ अर्थात नारी है अथवा गुरूकुलीय शिक्षा केंद्र हैं।

कहा है–''प्रशस्ता धार्मिकी माता विद्यते यः सः मातृमान'' गर्भावस्था से लेकर शिक्षा समाप्ति पर्यन्त जो संतान माता द्वारा निर्मित होती है, वह मातृमान है। जन्म देने से जननी तो सब बन सकती हैं, परंतु प्रारम्भिक काल में नैतिक और अध्यात्मिक शिक्षा देने वाली ही माता कहाती है। आधुनिक युग में मातृशिक्षा के अभाव में चारों दिशाओं में भ्रष्ट राजनेता, भ्रष्ट सन्यासी, भ्रष्ट न्यायाधीश, भ्रष्ट व्यवसायी, भ्रष्ट कृषक, सैनिक आदि पैदा हो गये हैं। महिलायें अश्लील फिल्में और नीति विहीन टी.वी. धारावाहिक देखते–देखते गर्भावस्था को प्राप्त करती हैं, जिससे संतानों में भी वही विचार संग्रहित होते हैं। भोगवाद एवं विलासिता युक्त जीवनचर्या के चलते महिलायें संतानों का मार्गदर्शन करने में असमर्थ हैं। माँ बनने का प्रशिक्षण प्रायः विलुप्त सा हो गया है। ''माता निर्माता भवति'' यह युक्ति कहीं सुनाई नही देती है।

ऋग्वेद में मातृत्व की महिमा इस प्रकार प्रतिध्वनित होती है– ''अम्बितमे नदीतमे देवीतमे सरस्वती। अप्रशस्ता इव स्मसि प्रशस्तिमम्ब नस्कृधि''।। ''हे विदुषी माँ ! आप उत्कृष्ट अध्यापिका, उपदेशिका और निर्देशिका हैं। हे माँ हमारे जीवन पथ को विस्तारित करो।'' पिता और अध्यापक द्वारा संतानों को शिक्षा देने से पूर्व माँ उनको वर्णोच्चारण और शिष्टाचार की शिक्षा देकर विद्यादात्री की भूमिका निभाती है। शैशवावस्था में माता के अमृत उपदेश से संतान जीवन भर प्रभावित रहती है। माँ की भाषा उनकी मातृभाषा बनती है। माँ की वाणी उनके लिये महौषधी और अक्षयनिधि है। अमेरिका के प्रथम और यशस्वी राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन ने एक आम सभा में कहा था– ''आज मै जो कुछ भी हूँ, उसका श्रेय मेरी माँ को है। मृत्युशय्या में उन्होने मुझे उपदेश दिया था कि मै जीवन भर नशे का सेवन न करुँ। उस समय मेरी आयु पन्द्रह साल की थी। माँ के उपदेश का मैंने जीवन भर पालन किया। ''फ्रांस के शासक नेपोलियन ने एक बार अपने देशवासियों से कहा था– ''देश के लिये एक सौ सुशिक्षित नारी प्रदान करो, मैं देश का कायाकल्प कर दूँगा।'' ''आदर्श मातृ शक्ति ही देश की दशा और दिशा बदल सकती है।''

नारी राष्ट्र यज्ञ की संयोजिका है। ''स्त्री ही ब्रह्मा वभूविथ''(अथर्ववेद) कर्तव्यनिष्ठ और सदाचारी नागरिक नारी के तप और साधना का फल होता है। यक्ष के प्रश्न के उत्तर में युधिष्ठिर ने कहा था– ''माता गुरूतरा भूमेः''– माँ भूमि से भी अधिक वंदनीया है। पिता का स्थान माँ ले सकती

है परंतु माँ का स्थान पिता कभी नही ले पाता। इसी कारण से महर्षि मनु ने उद्घोष किया है। उपाध्यायात दशाचार्य् आचार्याणां शतं पिता। पितृदशशतं माता गौरवेण अतिरिच्यते।।'' एक आचार्य दस अध्यापक के समान, सौ आचार्य पिता के समान और सहस्त्र पिता एक माता के समान समझना चाहिये।

सम्राट ऋतुध्वज की महारानी मदालसा गर्भावस्था में गाया करती थी– ''शुद्धोऽसि बुद्धोऽसि निरंजनोऽसि संसार माया परिवर्जितोऽसि''– ''रे गर्भस्थ पुत्र तू शुद्ध है, तू बुद्ध है, संसार माया से मुक्त है। इन संस्कारों के कारण तीन पुत्र बाल्यकाल में ही त्यागी और सन्यासी बन गये। तब पति ने राज्य को चलाने के लिये राजा की कामना महारानी से की। महारानी ने अपनी चतुर्थ संतान को अन्य राजसी संस्कार देकर सर्वगुण सम्पन्न राजा बनाया।

माता सुनीता का उपदेश पालन करके ध्रुव इतिहास में अमर हो गया। माता सीता के त्याग और तप से ही लव, कुश ने बाल्यकाल में ही राम की सेना को पराजित कर दिया था। माता शकुंतला ने पुत्र भरत को इतना साहसी और वीर बनाया जो शैशवकाल से ही शेरों से खेलता था। नेपोलियन जब गर्भस्थ थे, उनकी माता सेना शिविर में जाकर परेड देखती थी। उस समय उनका रोम रोम राष्ट्र रक्षा के लिये हर्षित होता था। गर्भावस्था में प्राप्त संस्कारों ने नेपोलियन को महान योद्धा बनाया। माता सुभद्रा ने वीर अभिमन्यु का, माता जीजाबाई ने वीर शिवाजी का जीवन निर्माण किया था।

गर्भाधान और गर्भधारण की अवस्था में माता एक पवित्र यज्ञ की विदुषी यज्ञकर्ता होती है। गर्भाधान के समय माँ जैसी संतान पाने की इच्छा करती है, वैसी ही संतान को प्राप्त करती है। ''तन्मना बीज गृह्णीयात'', माँ के पेट में संतान का दो दिशाओं मे निर्माण होता है– शारीरिक विकास और मानसिक विकास, दोनों विकास हेतु वेद में क्रमशः ''पुंसवन संस्कार'' और ''सीमंतोन्नयन संस्कार'' का विधान है। जब तक संतान माँ के गर्भ में है, तब तक उसके शरीर और मन को अपनी इच्छानुसार ढाला जा सकता है। जो माताएं संतान के जन्म के बाद उसके बिगड़ जाने को देखकर रोया करती हैं, उन्हें समझ लेना चाहिए कि यह कष्ट उन्हें इसलिए झेलना पड़ रहा है कि जो वक्त बच्चे को ढालने का था वह उन्होंने खो दिया।

यह सर्व विदित है कि गर्भस्थ शिशु कण्ठ स्वर को भी पहचान सकता है, इसका परीक्षण मनोवैज्ञानिको और चिकित्सकों द्वारा किया जा चुका है। जैसे कुम्हार कच्ची मिट्टी से इच्छानुसार पदार्थ बना सकता है, मिट्टी सूख जाने पर उसमें क्षमता नही रहती। उसी प्रकार गर्भावस्था और जन्म से पाँच–सात साल तक शिशु का शरीर तत्व और मनस्तत्व माता की साधना के आश्रय में रहता है।

प्राचीन समाजशास्त्रियों और शिक्षाविदों ने सूक्ष्म दृष्टि से मातृत्व की महत्ता को समझा था। तद्नुसार उन्होंने नारी शिक्षा का दिशा निर्धारण किया था और ''नारी को भोग्या वस्तु नही अपितु देवीस्वरुपा सम्मान दिया था।'' परिणामस्वरूप दीर्घजीवी, बलवान, और विद्वान संतति उत्पन्न होने से समाज का चहुँमुखी विकास सम्भव हुआ था। हम सब नारी को अर्थात मातृ शक्ति को मनुस्मृति के अनुसार सम्मान दें और नारी भी अपनी गौरवमयी गरीमा को पहचाने तो आज भी हमारा समाज और देश वही प्राचीन गौरव को प्राप्त कर सकता है क्योंकि– ''यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः। यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रिया''। जहां पर स्त्रियों का सम्मान होता है, वहां देवता रमते हैं। जहाँ उनका तिरस्कार होता, वहाँ सब काम निष्फल होते हैं।

''शोचन्ति जामयो यत्र विनश्यत्याशु तत्कुलम्। न शोचन्ति तु यत्रैता वर्धते तद्धि सर्वदा'' जिस कुल में स्त्रियाँ दुःखी रहती हैं, वह जल्दी ही नष्ट हो जाता है । जहां वे दुःखी नहीं रहतीं, उस कुल की वृद्धि होती है ।

स्वाध्याय का महत्व

–मनमोहन कुमार आर्य

मनुष्य जीवन और इतर प्राणियों के जीवन में सबसे महत्वपूर्ण अन्तर यह है कि मनुष्य अपनी बुद्धि की सहायता से विचार व चिन्तन सहित सत्यासत्य का निर्णय करने व अध्ययन–अध्यापन करने में समर्थ है जबकि अन्य प्राणियों को ईश्वर ने मनुष्यों के समान बुद्धि नहीं दी है। मनुष्यों को दो प्रकार का ज्ञान होता है जिसे स्वाभाविक व नैमित्तिक ज्ञान कहते हैं। स्वाभाविक ज्ञान को सीखना नहीं होता वह स्वभावतः व स्वमेव ईश्वर प्रदत्त आत्मा में होता है और नैमित्तिक ज्ञान वह होता है जिसे मनुष्य आचार्यों, माता–पिता, स्वाध्याय, विचार, चिन्तन व अपने अनुभव आदि से सीखता है। पशु व पक्षी आदि प्राणियों में स्वाभाविक ज्ञान होता है और कई अर्थों में वह मनुष्यों से भी अधिक होता है परन्तु वह नैमित्तिक ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकते। मनुष्य अपनी बुद्धि की सहायता से माता–पिता, विद्वानों, आचार्यों व स्वाध्याय आदि से अपने ज्ञान में निरन्तर वृद्धि करता रहता है। ऐसा करके ही वह विद्वान, ज्ञानी, वैज्ञानिक, चिन्तक व मनीषी बन जाता है। जिस प्रकार माता–पिता आचार्य अपने शिष्यों को ज्ञान देते हैं उसी प्रकार स्वाध्याय से भी वह ज्ञान मनुष्य प्राप्त कर सकता है। वास्तविकता यह है कि हमारे माता–पिता व आचार्य भी स्वाध्याय व अध्ययन से ही ज्ञान प्राप्त करते हैं। अतः पुस्तकों के अध्ययन से भी अनेक विषयों का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है।

हमारे ऋषि मुनि शास्त्रों में लिख गये हैं कि मनुष्यों को स्वाध्याय करने में प्रमाद नहीं करना चाहिये। स्वाध्याय सन्ध्या का अंग है और यह प्रतिदिन किया जाता है। स्वाध्याय के अन्तर्गत स्वयं अर्थात् अपनी आत्मा को जानना भी होता है और इसके साथ वेद एवं ऋषिकृत वैदिक साहित्य का अध्ययन व उसका प्रवचन आदि से प्रचार करना भी कर्तव्य होता है। जो मनुष्य जिस पदार्थ को कहीं से व किसी से लेता है और उसे अपने पास ही सीमित कर लेता है वह उचित नहीं होता। वह ऋणी कहलाता है और उसे वह ऋण ब्याज व सूद सहित चुकाना पड़ता है। ऋणी मनुष्य का कर्तव्य होता है कि उसने अपने आचार्यों से जो सीखा है, उसे दूसरों को भी सिखाये। ऐसा करने पर ही सृष्टि क्रम भली प्रकार से चल सकता है। महाभारतकाल के बाद हम पाते हैं कि अध्ययन–अध्यापन की व्यवस्था क्षीण व निर्बल हो गई थी जिस कारण महाभारत काल तक जो ज्ञान हमारे ऋषि व विद्वानों के पास उपलब्ध था, उसका प्रवचन व अध्यापन द्वारा प्रचार न होने से देश व संसार में अज्ञान फैल गया जिसका परिणाम अन्धविश्वास व सामाजिक असमानता आदि के रूप में सामने आया। यदि महाभारतकाल के बाद भी वेदों का पठन–पाठन व प्रवचन आदि जारी रहता तो कोई कारण नहीं था कि संसार में अन्धविश्वास फैलते और आज जो मिथ्या मत–मतान्तरों की वृद्धि हुई व हो रही है, उनका कहीं किंचित अस्तित्व होता। अन्धविश्वास व सभी समस्याओं का मूल कारण महाभारतकाल के बाद विद्या वृद्धि में बाधाओं का होना ही सिद्ध होता है।

महर्षि दयानन्द जी के जीवन का अध्ययन करने पर यह ज्ञात होता है कि वह महाभारतकाल के बाद पहले ऐसे विद्वान, आचार्य व ऋषि थे जिन्हें वेदों के सत्य अर्थों का ज्ञान था। उन्होंने अपने अध्ययन, ऊहा व अनुसंधान से इस तथ्य को जाना था कि वेद सृष्टि की आदि में ईश्वर प्रदत्त ज्ञान है। वेदों के सभी मन्त्र सत्य ज्ञान के उपदेशों से भरे हुए हैं। सभी सत्य विद्याओं का मूल भी वेदों में विद्यमान है। उन्होंने ऋग्वेदादिभाष्य–भूमिका ग्रन्थ लिखकर अपनी इस मान्यता पर प्रकाश डाला एवं इसे सत्य प्रमाणित किया। ईश्वर के सच्चे स्वरूप व गुण–कर्म–स्वभाव का जो यथार्थ ज्ञान वेदों से उपलब्ध होता है वह संसार के अन्य किसी ग्रन्थ से नहीं होता। सारा वैदिक साहित्य वेदों को आधार बनाकर ही प्राचीन ऋषियों ने रचा था। इन ग्रन्थों

में प्रमुख ग्रन्थ 6 वेदांग, 4 ब्राह्मण ग्रन्थ, 6 दर्शन ग्रन्थ और मुख्य 11 उपनिषदें आदि हैं। विशुद्ध मनुस्मृति भी वेदों के विधानों के आधार पर महर्षि मनु द्वारा प्रणीत ग्रन्थ है जिसमें मानव धर्म का व्याख्यान है। यदि कोई मनुष्य अपराध करता है तो राजा द्वारा उसके दण्ड का विधान भी मनुस्मृति में है। राजनीति सहित राजा के कर्तव्यों एवं शासन व्यवस्था पर भी इस ग्रन्थ में प्रकाश डाला गया है। विद्वानों को इसका अध्ययन एवं प्रचार करना चाहिये जिससे जन–सामान्य को यह ज्ञान हो सकता है कि सृष्टि के आरम्भ से ही वैदिक ज्ञान परम्परा व संस्कृति–सभ्यता कितनी समृद्ध एवं उन्नत थी। यह भी बता दें कि वेद सहित प्रमुख समस्त वैदिक साहित्य का हिन्दी में अनुवाद व टीकायें आदि उपलब्ध हैं जिससे हिन्दी पढ़ने की योग्यता रखने वाला साधारण व्यक्ति भी वेदों का पर्याप्त ज्ञान प्राप्त कर सकता है।

स्वाध्याय से मनुष्य की बुद्धि एवं आत्मा की उन्नति वा विकास होता है। ईश्वर व जीव सहित जड़ सृष्टि वा ब्रह्माण्ड विषयक सभी शंकाओं व प्रश्नों का समाधान भी होता है। मनुष्य जन्म क्यों हुआ व हमारा भविष्य एवं परजन्म किन बातों से उन्नत व अवनत होते हैं, इसका ज्ञान भी हम स्वाध्याय से प्राप्त कर सकते हैं। ईश्वर, माता–पिता, समाज, देश व विश्व के प्रति हमारे क्या कर्तव्य हैं और उनका पालन किस प्रकार से किया जा सकता है, इसका ज्ञान भी हमें स्वाध्याय से मिलता है। मनुष्य जीवन का उद्देश्य दुःखों की पूर्ण निवृत्ति है। दुःखों से पूर्ण निवृत्ति का नाम मोक्ष है। इसकी प्राप्ति के लिए करणीय कर्तव्यों का विधान ऋषि दयानन्द जी के ग्रन्थों एवं दर्शन व उपनिषद आदि ग्रन्थों में मिलता है। जो मनुष्य वैदिक ग्रन्थों का अध्ययन करता है उसे ईश्वर, जीवात्मा, सृष्टि, उपासना सहित भौतिक विषयों का भी पूर्ण ज्ञान प्राप्त होता है। स्वाध्याय से मनुष्य देव, विद्वान, आर्य, ईश्वरभक्त, वेदभक्त, मातृपितृभक्त, आचार्यभक्त, देशभक्त, समाजसेवी व समाज सुधारक सहित आदर्श जीवन व चरित्र से पूर्ण मानव बनता है। मत–मतान्तर के ग्रन्थ मनुष्य का ऐसा विकास नहीं करते जैसा कि वेद व वैदिक साहित्य से होता है। हमारे विश्व प्रसिद्ध आदर्श महापुरुष राम, कृष्ण, दयानन्द, चाणक्य, शंकराचार्य जी आदि सभी वैदिक साहित्य की देन थे। इन लाभों को प्राप्त करने के लिए सभी मनुष्यों को वेद एवं वैदिक ग्रन्थों का नित्य प्रति स्वाध्याय अवश्य ही करना चाहिये जिससे उनका सम्पूर्ण विकास व उन्नति होगी और उनका जीवन ज्ञान की प्राप्ति से सुखी व सन्तुष्ट होगा। ऋषि दयानन्द जी ने लिखा है कि मनुष्य को जो सुख ज्ञान की प्राप्ति से मिलता है उतना व वैसा सुख धन व सुख के साधनों से भी नहीं मिलता। अतः स्वाध्याय से अपना ज्ञान बढ़ाना सभी मनुष्यों का कर्तव्य व धर्म है।

मनुष्य जन्म की सफलता भी स्वाध्याय करने व उससे अर्जित ज्ञान से ईश्वरोपासना व समाज के हितकारी कार्य करने में ही है। स्वाध्याय से हम विवेक को प्राप्त होते हैं जिससे भक्ष्य और अभक्ष्य पदार्थों का भी ज्ञान व विवेक होता है। स्वाध्यायशीलता से मनुष्य को अच्छे संस्कार मिलते हैं जिससे वह दूसरों का शोषण व अन्याय नहीं करता और न ही दूसरों को अपना शोषण व अपने साथ अन्याय करने देता है। स्वाध्याय से आत्मा व शरीर दोनों का समुचित विकास होता है। मनुष्य रोग रहित रहकर दीर्घायु भी होता है। स्वाध्यायशील मनुष्य समाज का जितना उपकार कर सकता है उतना स्वाध्याय रहित मनुष्य सम्भवतः नहीं कर सकता। स्वाध्याय से मनुष्यों की आत्मिक शक्ति में भी वृद्धि होती है। ज्ञान से उसे अच्छे कार्यों को करने में उत्साह उत्पन्न होता है। वह जानता है कि वह जो भी शुभ कर्म करेगा उसका लाभ कई गुणा होकर उसे भविष्य व परजन्म में मिलेगा। उसके प्रारब्ध में उन्नति होगी और उससे उसका भावी जन्म श्रेष्ठ योनि व अच्छे परिवेश में होगा। ऐसे अनेक लाभ स्वाध्याय से मिलते हैं। दैनिक यज्ञ, परोपकार व परसेवा की प्रेरणा भी स्वाध्याय से मिलती है। अतः वेद, वैदिक साहित्य सहित ऋषि दयानन्द के सत्यार्थप्रकाश व अन्य ग्रन्थों एवं आर्य विद्वानों के वेद विषयक साहित्य का अवश्य ही अध्ययन करना चाहिये।

A Tribute to the Great Aryans

We are indeed very grateful to our ancestors, the great Aryans who from the depth of their intuitive, subtle, penetrative and piercing genius bestowed on us an invaluable, veritable, illimitable, bona fide and unquestionable storehouse of true knowledge in the form of Vedic mantras, more like pearls from the great Indian Ocean What is Vedas?

The Vedas are considered Word of God' by Aryans across the world. The Sanskrit word, Veda, means knowledge, original, pure and unconditioned knowledge One may argue. The Vedas are Hindu scriptures. No, Hindu is very recent foreign and non-Aryan word The real identification of Hindus is Vedic Aryans, verily the ancestors of the human race on earth, who believed that Vedas are repository pure knowledge. Vedic knowledge is no compilation of human knowledge. It has come from the transcendental world through inspired souls-highly inspired rishis - Agni, Vayu. Aditya, and Angira. It is also called Shabda-pramana' and 'shrui'-coming as it did through oral chants in form of words.

Verily, therefore, the Vedas are rightly considered the WORD OF GOD, bequeathed to us from adi-rishis the Vedas passed on by the Creator himself through inspired souls in their intuitive wisdom in deep Samadhi to us by word of mouth (oral chants) through several millennia. That is why the name, SHRUTI (spoken Shastra),

What is contained in the Vedas? Quoting Sankaracharya of Govardhan Math Puri, Swami Bharti Krshna Tirthaji, in preface to his magnum opus Vedic Mathematics

The very word Veda has this derivational meaning that is the fountainhead and illimitable storehouse of all knowledge. This derivation in effect, means, connotes and implies that the Vedas should contain within themselves all knowledge needed by mankind relating to not only to the so-called spiritual (or other-worldly) matters but also to those usually described as purely secular, temporal or worldly, and also to the means required by humanity as such for the achievement of all round, complete and perfect success in all conceivable directions and that there can be no adjective or restrictive epithet calculated (or tending) to limit that knowledge down in any sphere, any direction or any respect whatsoever.

The Vedic knowledge, through the stream of chants, came down to Veda-Vyasa, the celebrated sage of the Mahabharata limes. It was he who arranged the entire Vedic knowledge into four texts to impart them document form for posterity. He categorized the entire

Vedic knowledge into four divisions: the Rigveda, the Yajurveda, the Samaveda, and the Atharvaveda. Out of all, the Rigveda is recognized the most ancient text on philosophy and physical sciences in the world. The reason might be because the West did not read the entire Vedas. They could only lay hands-on Rigveda and, therefore, felt so. In fact, the entire Vedic knowledge is most archaic and ancient, anaadi (no beginning and no end). The boundless infinite assembly of Universes designated by a single word COSMOS is fully impregnated to the minutest atoms and sub-atoms with the knowledge of the Vedas. Also, the Vedic knowledge is not intended for any particular race, time, or geographical region of the world. The Creator delivered it as a constitution for the good of human species.

In addition to documentation of the knowledge of Vedas into Shastras, apprehending danger to their existence after Mahabharata War, the great rishi Veda-Vyasa took special pains to teach the Vedas to several groups of his dedicated disciples, and dispatched them to the four corners of the world with a view to protect the divine knowledge and preserve it from disappearing during onslaught of time and war.

The Holy Vedas, verily, have been revealed to mankind in Vedic Language, the classical Sanskrit or deva bhasha or divine language-coming as it did through cosmic vibrations of the Universe caught by the adi-rishis in deep samadhi Sanskrit of the Vedas is done in complex meters, filled with various sophisticated words, and sounds) full of synonyms indicating long, rich and varied connotations

The Vedas have since been translated into several languages of the world including English. Western scholars like Griffith. Wilson and Max Muller wrote commentaries in English Dr. Satya Prakash of the University of Allahabad, who later donned the robes of a sanyasi, also wrote beautiful commentary on Rigveda in English in ten big volumes Hindu Aryans over the world regard the authority of the Vedas supreme and final Unlike books of other religions, the Vedas don't need any proof for accuracy. They are considered authentic, their own proof (self-proof)- svatah pramana.

Verily therefore, the Vedas are a great gift to humanity from the great Aryans of antiquity, who though denigrated and maligned as invaders and barbarians by some Westerners with vested interests.

Dr. Raja Ram Mohan Roy of Toronto, dealing with the science of Cosmology and Creation of the Universe in his book “Vedic Physics” says that the modern physicists Cannot ignore Rigveda, which is perfect science of the cosmos. He emphatically noted that the Rigveda (as also other Vedas) not a product of primitive illiterate barbarians as many Westerners with selfish motives have called them. Should it be so it would not have taken a minute for the western scientists lo dump the Vedas out right? Vedas have been acclaimed as

the product of a very highly civilized group of people with rare gift of genius, par par-excellence that enabled them to look into the structure of the minutest of atoms and sub-atoms and also the boundaries of the expanding and contracting cosmos (in evolution and involution) during state of Samadhi

Thus Aryan (you and me) across the world are therefore, duty bound to propagate, spread the message of the great Aryans (Vedas), not just to please own self but to safe guard the interest of posterity. With Vedic media paper like PAVAMAN, our effort is to reach out into as many segments of society across the world as possible.

Everybody is welcome without any obligation to register with freedom to donate Only then we shall be successful in our mission of noble humans inhabiting the entire globe.

Note:-

The four Vedas documented so far: Rigveda, Yajurveda, Samaveda and Atharvaveda

Rigveda contains 10 mandals. 8 Ashtaks, 64 Adhyayas, 85 Anuvaaka, 1028 Suktas, 2024 Vargas, and 10589 mantras making it the largest of all.

Yajurveda contains 40 Adhyayas and 1975 muntras.

Samaveda is in two parts- Purvardha and Uttarardha and contains 22 Adhayayas and 1875 mantras.

Atharvaveda has 20 Khanda, 24 Prapathaka, 111 Anuvaaka, 708 Suktas, 730 Vargas, and 5977 mantras.

The four Vedas, therefore, have 20,416 mantras in all.

दिन रात में ऋतु प्रभाव

तत्र पूर्वान्हे वसन्तस्य लिग्ङ मध्यान्हे ग्रीष्पस्य, अपरान्हे प्रावृषः प्रदोशेवार्षिकं, शारदमर्धरात्रे, प्रत्युषसि हैमन्तमुपलक्षयेत् एवमहोरात्रमपि वर्षमिव शीतोष्ण वर्ष लक्षणं दोषोपचय प्रकोपोपशमैर्जानीयात् ।।

दिन के प्रारम्भ के समय प्रातः काल में वसन्त ऋतु के लक्षण मौजूद होते हैं। दोपहर को ग्रीष्म ऋतु और दोपहर बाद प्रावृट ऋतु के लक्षण होते हैं। सन्ध्या समय वर्षा ऋतु के और आधी रात में शरद ऋतु के लक्षण होते हैं। सूर्योदय से पहले के प्रहर में, यानि पिछली रात में, जिसे ब्रह्ममुहूर्त या अमृत बेला भी कहा जाता है, हेमन्त ऋतु के लक्षण होते हैं। शीतकाल में यह समय अधिक ठण्डा होता है और ग्रीष्म काल में शिशिर ऋतु जैसा होता है।

तंत्रिका तंत्र से सम्बद्ध रोग

–डॉ० भगवान दास

अर्दित या मुख घात (Facial Paralysis)

हमारे शरीर के दूसरे अंगों की ही तरह चेहरे की मांसपेशियों का पोषण भी तंत्रिकाएं (nerves) करती हैं। ये तंत्रिकाएं ही इन पेशियों की क्रियाओं को नियंत्रण में रखती हैं। जब कभी किसी स्थानीय (local) सूजन के कारण खोपड़ी से बाहर निकलते हुए तंत्रिकाएं दब जाती हैं, तो इनके कार्यों में विकार आ जाता है। यह सूजन अधिकतर ठंडी हवा लगने से और अनुचित (अपथ्य) आहार के सेवन से उत्पन्न होती हैं।

अर्दित या मुखघात की सबसे पहली निशानी यह है कि रोगी अपने चेहरे में जकड़ाहट महसूस करता है तथा उसे चेहरे को हिलाने–डुलाने में कठिनाई भी होती है। जब अर्दित अंदर तक पहुंच जाता है, तो घातवाले चेहरे की तरफ सुन्नपन और गतिहीनता(हिला–डुला न सकना) आ जाती है। रोगी अपनी आंखें बंद नहीं कर सकता और उनमें से आंसू बहते रहते हैं। कुछ खाने–पीने में भी रोगी को कठिनाई होती है।

यह मुखघात पूर्ण रूप में अथवा अपूर्ण व अधूरे रूप में भी हो सकता है। अपूर्ण मुखघात में अधिकतर चेहरे का निचला भाग विकारग्रस्त होता है।

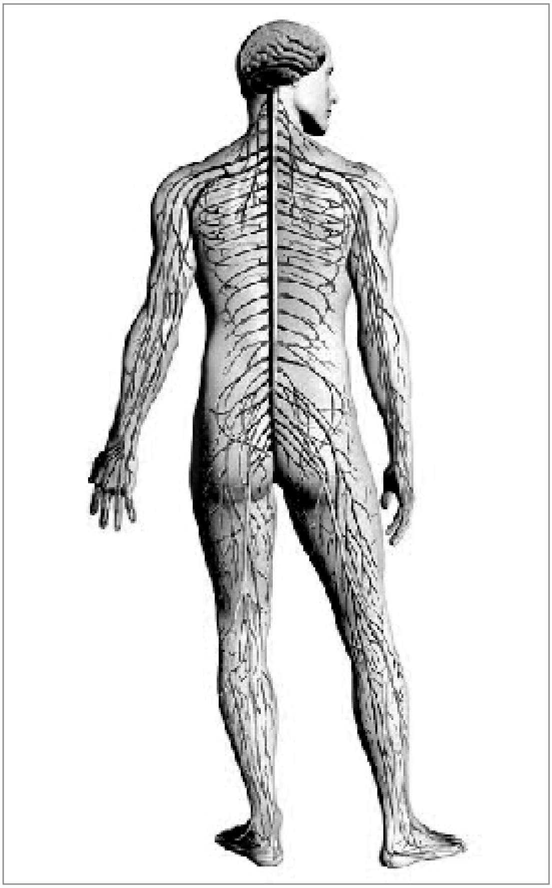

उपचार

रोग की इस अवस्था में कपड़े की एक पोटली के अंदर नमक डालकर सिकाई करने से रोगी को बहुत लाभ मिलता है। इस पोटली को तवे पर रखकर गर्म कर लेना चाहिए। रोगी के चेहरे पर सिकाई करने से पहले परिचारक को अपनी अंगुलियों से छूकर देख लेना चाहिए कि पोटली बहुत अधिक गर्म न हो। इतना गर्म करना चाहिए कि त्वचा सहन कर सके। चेहरे की तंत्रिका खोपड़ी से निकलकर कर्णपालि (ear-lobe) के नीचे स्थित छेद से होती हुई आती है। इसलिए सिकाई करते हुए इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि चेहरे के इस भाग पर अच्छी तरह सेक दिया जाए। यह सिकाई दिन में दो बार लगभग आधा–आधा घटा तक करनी चाहिए। चेहरे को ठंडी हवा से हमेशा बचाकर रखना चाहिए। रोग वाले हिस्से को ऊनी मफलर या स्कार्फ से हमेशा ढके रखना चाहिए। चेहरे के रोगी भाग पर मालिश करने से भी बहुत लाभ मिलता है। इसके लिए महानारायण तैल को सहन करने योग्य गर्म करके पूरे भाग में मालिश करनी चाहिए। यह मालिश धीरे–धीरे और हल्के से करनी चाहिए। मालिश के बाद लगभग आधा घंटा तक रोगी को घर के अंदर ही रहना चाहिए, जिससे ठंडी हवा न लगे।

खाने के लिए रोगी को वातगजांकुश नामक औषधि देनी चाहिए। यह गोलियों के रूप में मिलती है। इसकी दो–दो गोलियां दिन में तीन बार शहद के साथ रोगी को देनी चाहिए। सेवन से पहले इन गोलियों को पीसकर चूरा बना लें और शहद में अच्छी तरह मिलाएं। एक दूसरी औषधि है–दशमूलारिष्ट। इसका तंत्रिका तंत्र पर विशेष प्रभाव पड़ता है। यह तंत्रिकाओं को शक्ति प्रदान करती है व उसके कार्यों को अच्छी तरह चलाने में सहायता प्रदान करती है। यह औषधि सूजन को भी कम करती है। इसका सेवन छः–छः चम्मच (30 मि.लि.) की मात्रा में समान भाग जल मिलाकर, दिन में दो बार भोजन के पश्चात् कराया जाता है। चूंकि इस रोग में रोगी को बहुत अधिक पीड़ा का कष्ट नहीं भोगना पड़ता, अतः जैसे ही उसे कुछ आराम मिलता है वह औषधि का सेवन छोड़ देता है। इस प्रकार मुखघात रोग का कुछ अंश बचा रहता है, उसकी चिकित्सा नहीं हो पाती, अधूरी रह जाती है। इस तरह यह रोग जीवन–भर बना रहता है। यही कारण है कि रोगी को ध्यानपूर्वक इस रोग की पूरी चिकित्सा करनी चाहिए। जब उसे लगता है कि रोग पूरी तरह ठीक हो गया है, तो उसके दो सप्ताह बाद तक भी उपचार जारी रखना चाहिए। ऊपरिलिखित दोनों औषधियों को अलग–अलग अथवा इकट्ठे सेवन करते रहना चाहिए। इस रोग के दुबारा आक्रमण से बचने के लिए भी इन औषधियों का बाद तक सेवन जारी रखना आवश्यक है।

ये औषधियां उसी स्थिति में अपना प्रभाव दिखाएंगी, जब रोगी कब्ज से पीड़ित न हो। अर्थात् कब्ज होने पर इन दवाओं से अधिक लाभ नहीं मिल पाता। यदि कब्ज हो तो रोगी को पेट साफ के लिए नियमित रूप से एरंड का तेल देना चाहिए। पेट साफ के अतिरिक्त यह तेल तंतुओं (fibres), हड्डियों और जोड़ों की सूजन को भी दूर करने में सहायक है। इस प्रकार इसके सेवन से रोगी को बहुत लाभ मिलता है।

आहार

रोगी को चावल के स्थान पर गेहूं का प्रयोग करना चाहिए। उसके लिए गाय का घी, गाय के दूध का मक्खन और इस दूध से तैयार लस्सी बहुत अधिक लाभदायक हैं। पत्ते वाली सब्जियां इस रोग में उपयोगी हैं। सब्जियों में पीला सीताफल (पेठा) और अरबी रोगी के लिए हानिप्रद हैं। किसी भी प्रकार की दालों का सेवन भी उपयोगी नहीं है। अर्दित के रोगी की दही, खट्टी और ठंडी वस्तुओं, जैसे–आइसक्रीम, बहुत ठंडे पेय–पदार्थ, कोका–कोला और मद्य–पदार्थों से परहेज रखना चाहिए।

अन्य आचार–व्यवहार

रोगी को सर्दी के मौसम में अपना मुंह अच्छी तरह ढककर रखना चाहिए। उसे अपने आप को बारिश और ठंडी हवा लगने से बचाना चाहिए। जैसा कि पहले बताया गया है यह रोगी अपनी आंखें बंद नहीं कर सकता। यहां तक कि सोते समय भी उसकी आंखें खुली रहती हैं, अतः उसकी आंखों में कीड़े, आदि तथा अन्य कोई भी बाहरी वस्तुएं गिरने का भय बना रहता है। इसलिए इन सबसे आंखों को बचाने के लिए पूरा ध्यान रखना आवश्यक है। अर्दित के रोगी के लिए रात के समय अधिक देर तक जागते रहना बहुत हानिकारक है।

अपस्मार या मिर्गी (Epilepsy)

आयुर्वेद के अनुसार, मन और शरीर के विकारों को आधार मानकर सभी रोगों को निम्नलिखित तीन श्रेणियों में बांटा जा सकता हैः

1. शारीरिक या दैहिक (physical or sematic) रोग,
2. मनोदैहिक (psycho-somatic) रोग, तथा
3. मानसिक (psychic) रोग।

उदाहरणतः रक्ताल्पता या पांडुरोग प्रथम श्रेणी अर्थात् शारीरिक रोगों की श्रेणी में आता है। ब्रांकिअल अस्थमा (दमा) या तमक श्वास दूसरी श्रेणी अर्थात् मनोदैहिक रोग है, तो अपस्मार या

मिर्गी तीसरी श्रेणी अर्थात् मानसिक रोग है।

यह अपस्मार पांच प्रकार का है। इनमें चार प्रकार तो तीनों दोषों की प्रधानता के आधार पर हैंः जैसे—वातिक, पैत्तिक, कफज तथा तीनों दोषों के एक साथ कुपित होने के कारण (सान्निपातिक) पांचवां प्रकार योषापस्मार है, जिसे आम भाषा में हिस्टीरिया के नाम से जाना जाता है। इस प्रकार के अपस्मार का शिकार अधिकतर औरतें ही होती हैं। इस रोग की उत्पत्ति के लिए विभिन्न प्रकार की मानसिक परेशानियों को ही जिम्मेदार माना जाता है। चूंकि हृदय और मन का आपस में गहरा संबंध है, अतः इसका हृदय पर मुख्य रूप से दुष्प्रभाव पड़ता है। मानसिक विकारों के साथ—साथ कब्ज, पेट में वायु तथा पाचन—क्रिया में विकार जैसे कुछ शारीरिक कारण भी इस रोग को बढ़ाने में सहायक हैं।

उपचार

अपस्मार रोग की आयुर्वेदिक चिकित्सा का मुख्य उद्देश्य तंत्रिका तंत्र (nervous system) के विकारों को दूर करना और हृदय को बल प्रदान करना है। इस दृष्टि से आयुर्वेदिक चिकित्सक प्रायः ब्राह्मी और वचा नामक वनस्पतियों का प्रयोग औषधि के रूप में करते हैं, ये दोनों ही पौधे दलदलीय स्थानों, खासकर छोटी—छोटी नदियों और झरनों के आस—पास मिलते हैं। इनमें ब्राह्मी के पूरे पौधे का प्रयोग ही औषधि के रूप में किया जाता है। इसके पत्ते और टहनियां मोटी और रस से भरी होती हैं, अतः जल्दी नहीं सूखतीं। इसलिए औषधि के लिए इस पौधे का रस निकालकर प्रयोग में लाया जाता है। जबकि वचा के कंद अथवा भूमि के नीचे वाले भाग का प्रयोग ही औषधि में किया जाता है। इस कंद का चूर्ण बनाकर प्रयोग में लाया जाता है। चूर्ण बनाने से पहले इस कंद को छाया में सुखा लेना चाहिए।

ब्राह्मी का रस या वचा का चूर्ण एक छोटे चम्मच (5 ग्रा.) की मात्रा में या दोनों को ही एक—एक चम्मच लेकर एक चम्मच शहद में मिलाकर, दिन में तीन बार रोगी को सेवन कराना चाहिए। ब्राह्मी का रस स्वाद में थोड़ा कड़वा होता है तथा वचा के चूर्ण में तीखी व कड़वी—सी गंध पाई जाती है। इन दोनों में शहद मिलाने से इनका कड़वा स्वाद तथा कड़वी—सी गंध काफी कम हो जाती है और खाने में सुविधा हो जाती है।

इन दोनों उपरोक्त औषधियों एवं कुछ अन्य औषधियों के मिश्रण से तैयार अनेक योग हैं, जिनका प्रयोग इस रोग की चिकित्सा में किया जाता है। इनमें कुछ योग तो बहुत शीघ्र अपना प्रभाव दिखाते हैं तथा उनका स्वाद और गंध भी बुरी नहीं होती। बृहत् वात कुलांतक रस नामक औषधि इसी प्रकार का लोकप्रिय योग है, जिसका प्रभाव बहुत जल्दी दिखाई देने लगता हैं इसमें अनेक औषधि द्रव्यों के साथ स्वर्ण भस्म भी पाई जाती है। प्रयोग से पहले स्वर्ण और दूसरी धातुओं को विषरहित और शरीर में शीघ्र घुलनशील बनाने के लिए अनेक प्रकार की औषधीय प्रक्रियाएं अपनाई जाती हैं। इस औषधि को 125 मि.ग्रा.(एक रत्ती) की मात्रा में, दिन में तीन बार शहद में मिलाकर रोगी को सेवन कराना चाहिए।

आहार

अपस्मार के रोग में गाय के घी का सेवन बहुत अधिक अपयोगी माना गया है। रोगी की नाक में गाय के घी की कुछ बूंदें डालकर और उससे गहरी नसवार लेने से बहुत शीघ्र लाभ मिलता है। तिक्त खाद्य पदार्थ इस रोग के लिए हानिकर हैं।

अन्य आचार—व्यवहार

रोगी को हमेशा किसी—न—किसी काम में व्यस्त रखना चाहिए, जिससे उसे अपने रोग के विषय में अधिक सोचने का समय ही न मिले। उसे सभी प्रकार के मानसिक तनावों और परेशानियों से बचकर रहना चाहिए। सिर और पैरों के तलुओं में प्रतिदिन तिल के तेल से मालिश करनी चाहिए। यह क्रिया रोग से शीघ्र छुटकारा दिलाने में सहायक है।

।। प्राचीन वैदिक विज्ञान ।।

आखिर, यह सब हमें क्यों नहीं पढ़ाया जाता?

1. विश्व में प्राप्त लेखन कार्य का प्रमाण 5500 वर्ष पूर्व हडप्पा संस्कृति के अन्तर्गत मिलता है। (Science Report, June 1999)

2. संस्कृत दुनिया की सबसे पहली भाषा है तथा यह सभी यूरोपियन भाषाओं की जननी है। संस्कृत ही कम्पयूटर साफ्टवेयर हेतु सर्वाधिक उपयुक्त भाषा है। (Forbes Magazine, July 1987)

3. विश्व का पहला विश्वविद्यालय तक्षशिला के रूप में 700 ई0पू0 स्थापित था। जहां पर दुनिया भर के 10500 विद्यार्थी 60 विषयों का अध्ययन करते थे।

4. बारूद की खोज 8000 ई0पू0 सर्वप्रथम भारत में हुई। (नीति चिन्तामणि)

5. वनस्पति शास्त्र की उत्पत्ति सर्वप्रथम भारत में हुई, जिसका प्रमाण वेदों में सुनियोजित रूप से वर्गीकृत विभिन्न वनस्पतियों से मिलता है।

6. दुनिया की सबसे सुनियोजित आवासीय सभ्यता हड़प्पा और मोहनजोदडों के रूप में 2500 ई0पू0 भारत में हुई।

7. सूर्य से पृथ्वी पर पहुंचने वाले प्रकाश की गणना भास्कराचार्य ने सर्वप्रथम भारत में की।

8. योरोपीय गणितज्ञों से पूर्व ही छठी शताब्दी में बोद्धायन ने पाई के मान की गणना की जो कि पाइथागेरस प्रमेय के रूप में जाना जाता है।

9. 5000 ई0पू0 ही हिन्दुओं को 10 की घात 53 तक गणना करने का ज्ञान था जबकि आज भी 10 की घात 12 (टेरा) तक ही गणना की जाती है।

10. यदि हमारा ज्ञान–विज्ञान एवं इतिहास इतना गौरवशाली एवं समृद्ध है, तो भारत के छात्रों को इस जानकारी से वंचित क्यों रखा जाता है?

आइए! वर्षों से भारतीयों को उनके ज्ञान से वंचित रखने के लिए चलाये जा रहे इस सुनियोजित षडयंत्र का हम सब मिलकर प्रतिकार करें।

1. राईटब्रदर्स से भी अनेक वर्ष पूर्व महर्षि दयानन्द सरस्वती के पटु शिष्य श्री बापुजी तलपदे महाराष्ट्र निवासी ने मुम्बई के चोपाटी स्थान पर वैदिक विधि से बना वर्तमान युग का प्रथम विमान बनाकर उड़ाया था।

2. अंकों का आविष्कार 300 ई0पू0 भारत मे हुआ। (Prof- O-M-Mathew, Bhavan's Journal)

3. शून्य (0) का आविष्कार भारत में ब्रह्मगुप्त ने किया।

4. अंकगणित का आविष्कार 200 ई0पू0 भास्कराचार्य ने किया। (Encyclopaedia Britannica)

4. बीजगणित का आविष्कार भारत में आर्यभट्ट ने किया। (Encyclopaedia Britannica)

5. सर्वप्रथम ग्रहों की गणना आर्यभट्ट ने 499 ई0पू0 की (Jewish Encyclopedia)

6. मोहनजोदडों व हड़प्पा में मिले अवशेषों के अनुसार भारतीयों को त्रिकोणमिति व रेखागणित का 2500 ई0पू0 भी ज्ञान था।

7. जर्मन लेखक डा० थामस आर्य के अनुसार सिन्धुघाटी सभ्यता में मिले भार–माप यंत्र भारतीयों के दशमलव प्रणाली के ज्ञान को दर्शाते हैं।

8. समय और काल की गणना करने वाला विश्व का पहला कालेन्द्र भारत में लता देव ने 505 ई0पू0 सूर्य सिद्धान्त नामक अपनी पुस्तक में वर्णित किया।

9. न्यूटन से भी पहले गुरुत्वाकर्षण का सिद्धान्त भारत में भास्कराचार्य ने प्रतिपादित किया। (Jewish Encyclopaedia)

10. 3000 ई0पू0 लोहे के प्रयोग के प्रमाण वेदों में वर्णित हैं, अशोक स्तम्भ भारतीयों के तत्वज्ञान का स्पष्ट प्रमाण है। (The Current Science)

11. सिन्धु घाटी सभ्यता से मिले प्रमाण सिद्ध करते हैं कि भारतीयों को 2500 ई0पू0 ताम्बे तथा जस्ते की जानकारी थी।

12. विभिन्न रासायनिक प्रक्रियाओं एवं रासायनिक रंगों का प्रयोग पांचवी शताब्दी में भारत द्वारा किया गया। (National Science Center, New Delhi)

13. विश्व का सबसे पहला औषधविज्ञान भारतीयों ने आयुर्वेद के रूप में दिया। चरक ने 2500 वर्ष पूर्व औषधविज्ञान को आयुर्वेद के रूप में संकलित किया।

14. लिम्का बुक ऑफ रिकार्डस् के अनुसार 400 ई0पू0 सुश्रुत (भारतीय चिकित्सक) ने सर्वप्रथम प्लास्टिक सर्जरी का प्रयोग किया।

15. विश्व में सर्वप्रथम 'वैदिक वैज्ञानिक' महर्षि दयानन्द ने आज से लगभग 125 वर्ष पूर्व यह घोषणा की थी कि पृथ्वी को बने लगभग दो अरब वर्ष व्यतीत हो चुके हैं और मानव की धरती पर प्रथम बार अमैथुनी उत्पति त्रिविष्टप अर्थात् 'तिब्बत' कहलाने वाले प्रदेश पर हुई।

16. तभी महर्षि दयानन्द सरस्वती ने यह भी सिद्ध किया कि पर्यावरण की सुरक्षा का सर्वोत्तम साधन यज्ञ हवन ही है।

17. महर्षि दयानन्द प्रथम वैदिक वैज्ञानिक थे जिन्होंने पुत्र या पुत्री के जन्म का कारण पत्नी के स्थान पर पति को बताया।

18. महर्षि दयानन्द ने वेद से व तर्क से यह सिद्ध किया कि आत्मायें ईश्वर से भिन्न हैं। ईश्वर एक सर्वव्यापक शक्ति है जब कि आत्मायें अनेक हैं व एकदेशीय हैं।

ईश्वर क्या है?

1) ईश्वर एक निराकार, सर्वव्यापक, सर्वज्ञ सृष्टिकर्ता चेतन शक्ति का नाम है। जिसे मुख्य रूप से 'ओ३म्' के नाम से पुकारते हैं। अल्ला, गॉड, आमीन–आमीन, ओंकार भी उसी के नाम हैं।

2. क्योंकि वह शरीर धारण नहीं करता, अतः वह न तो पैदा होता है और न ही कभी मरता है।

3. वह अभौतिक, शरीर रहित व निराकार होने से कभी भी गंदा नहीं होता। सदा सब जगह रहता है, अतः उसके अवतार की आवश्यकता नहीं है। सच्चाई तो यह है कि अवतार आत्मा का होता है, क्योंकि हम जन्म लेते, आते–जाते व उतरते तथा चढ़ते हैं, पर परमात्मा सदा सर्वत्र होने से न आता–जाता है और नहीं चढ़ता व उतरता है।

4. सारे संसार को बनाने, चलाने व कर्मानुसार फल देने वाला परमात्मा ही है, क्योंकि वह अकेला ही सब कार्यों को कर सकने से सर्वशक्तिमान् कहलाता है। यदि वह अपने कार्यों के करने में दूसरों की सहायता ले तो फिर सर्वशक्तिमान् न रहे।

5. ईश्वर एकरस व अपरिणामी है, अतः उसके न तो टुकडे होते है। न ही बूंद बनता और न ही निराकार होने से उसकी छाया होती है।

6. ईश्वर संसार के कण–कण में रहता है पर कण–कण ईश्वर नहीं होता। जैसे अग्नि संसार के कण–कण में रहती है पर हर वस्तु अग्नि नहीं होती।

7. ईश्वर निराकार शक्तिरूप में सब स्थानों पर रहता है पर वह मिलता केवल हृदय में ही है क्योंकि वही एक ऐसा स्थान है जहां उसे मिलने वाला आत्मा रहता है। इसीलिए ब्रह्मा, शिव, राम, कृष्ण व महर्षि दयानन्द उसे भक्ति योग से पाते थे। ये सब दिखाई देने वाले शरीर धारी भक्त हैं। ईश्वर की कोई मूर्ति या चित्र नहीं है क्योंकि वह निराकार है।

8. संसार के सभी पदार्थ कैसे भी आचरण और खान–पान से मिल सकते हैं, क्योंकि वह जड़ हैं या अल्पज्ञ व अल्प शक्तिमान् हैं पर परमात्मा केवल उसी की आत्मा में साक्षात् (ज्ञात) होता है जिसका हृदय शुद्ध, कर्म पवित्र व आचरण उसी की वेद वाणी के अनुसार हैं।

9. अपने पुरुषार्थ से कमाये धन, शाकाहार भोजन व संयम युक्त जीवन रखकर अष्टांग योग ही ईश्वर को मिलने का परम साधन है।

10. ईश्वर किसी से बुरे कर्म नहीं करवाता न ही वह जान बूझकर जन्म ही देता है। जो बिना कारण किसी को दुःख नहीं देता व किसी की हानि नहीं करता उसे ही केवल ईश्वर मिलता है।

जीव क्या है?

1. आत्मायें सब की एक जैसी है आत्मा अनेक हैं और निराकार है। हाथी, मनुष्य या चीटी में होने से आत्मा छोटी बड़ी नहीं होती।

2. आत्मायें अपने अच्छे–बुरे कर्मों के अनुसार बार–बार जन्म लेती व शरीर धारण करती व छोड़ती हैं जिसे मृत्यु कहा जाता है।

3. आत्मा कर्म करने में स्वतंत्र पर फल भोगने में परतन्त्र है। जिस आत्मा के जितने बुरे कर्म होते हैं वह उसी–उसी शरीर में जाती है। यह जरुरी नहीं कि एक बार मानव शरीर छोड़कर सभी अन्य शरीरों को प्राप्त हों।

4. आत्मा भी शक्तिरूप निराकार व अभौतिक होने से न तो कभी मरता है और न ही कभी मौलिक रूप से गंदा ही होता है। वह भी परमात्मा की तरह शुद्ध रहता है, तभी मुक्ति पाता है।

5. जब आत्मा वेद के अनुसार कर्म करता हुआ व व्यक्तिगत इच्छा को समाप्त करके निष्काम कर्म करता है तब इसकी मुक्ति के लम्बे आनन्दमय काल को भोगकर पुनः मानव शरीर को प्राप्त होता है, क्योंकि आत्मा द्वारा किये गये कर्म सीमायुक्त है, अतः उसका फल भी सीमायुक्त होने से सदा मुक्ति नहीं होती।

6. आत्मा परमात्मा के ध्यानयोग व मुक्ति में आनन्द से ठीक ऐसे ही रहता है जैसे अग्नि में लोहे का गोला।

प्रकृति क्या है?

1. 'प्रकृति' अत्यन्त छोटे–छोटे परमाणुओं का नाम है।

2. यह परमाणु जड़ है तथा अचेतन है जिनका आगे विभाजन नहीं होता। महाज्ञानी ईश्वर के बिना इनसे नियमपूर्वक कोई वस्तु बनना असम्भव है, इनमें ज्ञान नहीं और यह असंख्य है।

3. यह परमाणु अनादि और अनन्त है, अर्थात् न कभी उत्पन्न हुए हैं और न कभी नष्ट होंगे।

4. ईश्वर इन्हीं परमाणुओं को जोड़कर सृष्टि बनाता है। आग, पानी और पृथ्वी, यह इन्हीं परमाणुओं के संयोग का फल है। सूर्य, चांद आदि इन्हीं से बने हैं हमारा शरीर भी इन्ही परमाणुओं से बना है। (विशेष जानकारी हेतु सत्यार्थप्रकाश का आठवां समुल्लास पढें।)

5. जब सृष्टि परमाणु अलग–अलग हो जाते हैं तब उसको प्रलय या ब्रह्मरात्रि कहते हैं। जब सृष्टि बनी रहती है तो ब्रह्मदिन होता है।

साँख्यदर्शन तत्वज्ञान शिविर (द्वितीय भाग)

वैदिक साधन आश्रम, तपोवन, नालापानी, देहरादून

- वैदिक साधन आश्रम, तपोवन, देहरादून में 21 मई से 29 मई 2022 तक प्रातः 11 बजे से 12.30 बजे तक साँख्यदर्शन तत्वज्ञान की कक्षायें आचार्य आशीष जी, दर्शनाचार्य द्वारा ली जायेंगी। इन कक्षाओं में साँख्य दर्शन के चुने हुए सूत्रों व प्रकरणों के माध्यम से तत्वज्ञान को प्रायोगिक स्तर पर भी विकसित करने की प्रक्रिया पर प्रकाश डाला जायेगा।
- कक्षाओं की ऑडियो–वीडियो रिकार्डिंग्स की स्वीकृति नहीं होगी।
- कक्षाओं में प्रतिदिन भाग लेने वाले महानुभाव ही अपनी शंकायें/प्रश्न पूछने के अधिकारी होंगे।
- विद्या दान पूर्णतया निशुल्क रहेगा। विद्यार्थी अपने सामर्थ्यानुसार कृतज्ञता प्रकट कर वैदिक परम्परा का आदर्श प्रस्तुत करेंगे।
- आश्रम में निवास करने के इच्छुक महानुभावों के लिए आवास, भोजन आदि का व्यय आश्रम कार्यालय के अनुसार देय होगा।आश्रम में वर्षभर दोनों समय यज्ञ सत्संग का आयोजन होता है ।अतः आप उनसे भी लाभान्वित हो सकेंगे।

सम्पर्क सूत्र

श्री एन. के. अरोड़ा	–	9310444170
श्री प्रेम सिंह	–	9310141685
श्री प्रेम प्रकाश शर्मा (सचिव)	–	9412051586
श्री चन्दन सिंह (कार्यालय)	–	7895978734

MUNJAL SHOWA

हाई क्वालिटी शॉकर्स

- TPM Certified
- ISO / TS - 16949 - 2002 Certified
- ISO - 14001 Certified
- OHSAS - 18001 Certified

हमारे उत्पाद

- स्ट्रट्स/गैस स्ट्रट्स
- शॉक एब्जॉर्बर्स
- फ्रन्ट फोर्कस
- गैस स्प्रिंगस/विन्डो बैलेन्सर्स

मुंजाल शोवा लिमिटेड भारत की प्रमुख शॉक एब्जॉर्बस बनाने वाली कंपनी है जिसकी रेंज फ्रन्ट फोर्कस, स्ट्रट्स (गैस चार्जड और कन्वेन्शनल) और गैस स्प्रिंगस की टू व्हीलर/फोर व्हीलर उद्योगों को उपलब्ध कराती है। कंपनी गुणवत्ता और सुरक्षा के उच्चतम मानकों के अनुरूप अपने सभी उत्पादों का निर्माण करती है। कंपनी के उत्पाद आरामदायक और सुरक्षित सवारी देते हैं और ये टिकाऊ और विश्वसनीय भी हैं। मुंजाल शोवा लिमिटेड, QS 9000, TS–16949, ISO 14001, OHSAS 18001 और TPM प्रमाणित कंपनी है। मुंजाल शोवा के तीन मैन्युफैक्चरिंग प्लॉट हैं – गुड़गाँव, मानेसर (हरियाणा) और हरिद्वार (उत्तराखण्ड)। मुंजाल शोवा लिमिटेड का शोवा कार्पोरेशन जापान के साथ तकनीकी और वित्तीय सहयोग करार है।

हमारे ख्यातिप्राप्त ग्राहक

Hero HONDA HONDA MARUTI SUZUKI YAMAHA

मुंजाल शोवा लिमिटेड

प्लॉट नं. 9–11, मारुति इंडस्ट्रियल एरिया
गुड़गाँव–122015, हरियाणा
दूरभाष :
0124–2341001, 4783000, 4783100
ईमेल : msladmin@munjalshowa.net
वेबसाइट : www.munjalshowa.net

MUNJAL SHOWA

डाक पंजीयन UA/DO/DDN/75/2021-2023 समाचार पत्र पंजीयन 51900/88

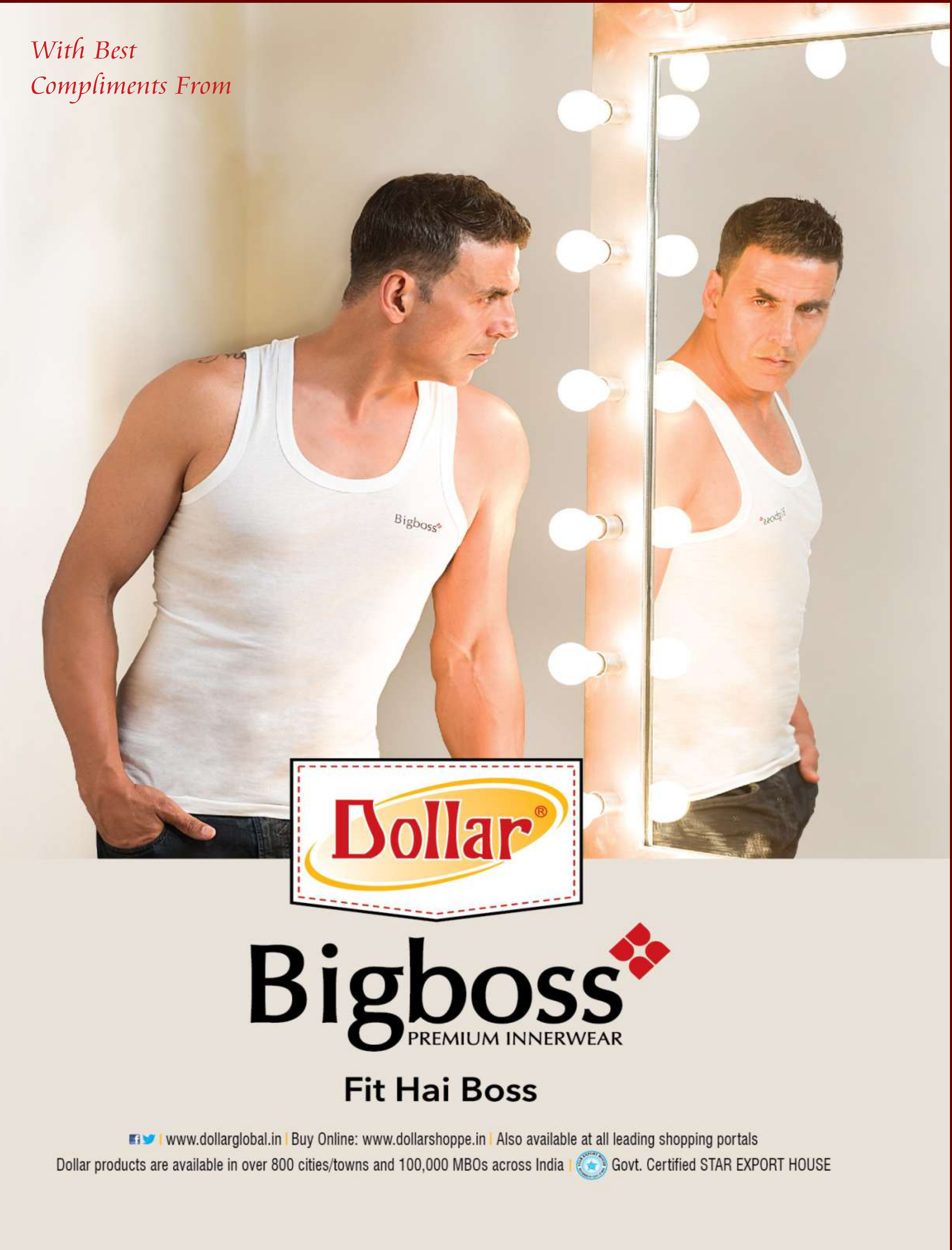

सरस्वती प्रेस, देहरादून, ई-मेल : akhilg333@gmail.com

वैदिक साधन आश्रम सोसाइटी के लिए प्रकाशक मुद्रक प्रेम प्रकाश द्वारा सरस्वती प्रेस, 2, ग्रीन पार्क, निरंजनपुर, देहरादून–248001 (उत्तराखण्ड) से मुद्रित एवं वैदिक साधन आश्रम सोसाइटी (रजि.), नालापानी, देहरादून (उत्तराखण्ड) से प्रकाशित।

संपादक– कृष्णकान्त वैदिक शास्त्री